

यह
क्यों
हुआ?

परमेश्वर
क्या
कर रहा है?

यह
क्यों
हुआ?

परमेश्वर
क्या
कर रहा है?

डैनी कनेडी



दू दूकनेक्शन्स

प्रेस

यह क्यों हुआ?

परमेश्वर क्या कर रहा है?

कॉपीराइट © 2015 डैनी कनेडी द्वारा, कवर डिजाइन गीनो मॉरो द्वारा

सभी धर्मग्रंथ उद्धरण, जब तक कि अन्यथा इंगित न किया गया हो, पवित्र बाइबल के किंग जेम्स संस्करण से लिए गए हैं।

चिह्नित पवित्रशास्त्र उद्धरण (एनएसबी) द लॉकमैन फाउंडेशन द्वारा न्यू अमेरिकन स्टैंडर्ड बाइबल®, कॉपीराइट © 1960, 1962, 1963, 1968, 1971, 1972, 1973, 1975, 1977, 1995 से लिए गए हैं। अनुमति द्वारा उपयोग किया जाता है। www.Lockman.org

चिह्नित धर्मग्रंथ उद्धरण (एनसीवी) पवित्र बाइबल, न्यू सेंचुरी संस्करण, कॉपीराइट © 1987, 1988, 1991 से वर्ड पब्लिशिंग, डलास, टेक्सास 75039 द्वारा लिए गए हैं। अनुमति द्वारा उपयोग किया जाता है।

चिह्नित धर्मग्रंथ उद्धरण (एनएलटी) पवित्र बाइबल, न्यू लिविंग ट्रांसलेशन, कॉपीराइट © 1996, 2004, 2007 से टिंडेल हाउस फाउंडेशन द्वारा लिए गए हैं। टिंडेल हाउस पब्लिशर्स, इंक., कैरल स्ट्रीम, इलिनोइस 60188 की अनुमति से उपयोग किया गया। सभी अधिकार सुरक्षित।

चिह्नित धर्मग्रंथ उद्धरण (टीएलबी) द लिविंग बाइबल से लिए गए हैं, कॉपीराइट © 1971 टिंडेल हाउस पब्लिशर्स, इंक., कैरल स्ट्रीम, इलिनोइस 60188 की अनुमति से उपयोग किया गया। सभी अधिकार सुरक्षित।

चिह्नित धर्मग्रंथ उद्धरण (एनआईवी) पवित्र बाइबल, न्यू इंटरनेशनल वर्जन®, एनआईवी® से लिए गए हैं। कॉपीराइट © 1973, 1978, 1984, 2011 Biblica, Inc.™ द्वारा, जॉर्डरवन की अनुमति से प्रयुक्त। पूरे विश्व में सर्वाधिकार सुरक्षित। www.zondervan.com

चिह्नित पवित्रशास्त्र उद्धरण (एमपी) द लॉकमैन फाउंडेशन द्वारा एम्प्लीफाइड बाइबल, कॉपीराइट © 1954, 1958, 1962, 1964, 1965, 1987 से लिए गए हैं। अनुमति द्वारा उपयोग किया जाता है।

चिह्नित धर्मग्रंथ उद्धरण (जे.बी. फिलिप्स) को साइमन एंड शुस्टर, इंक. के एक प्रभाग स्क्रिब्लर की अनुमति से द न्यू टेस्टामेंट इन मॉडर्न इंग्लिश-जे.बी. फिलिप्स द्वारा संशोधित संस्करण से पुनर्मुद्रित किया गया है।

कॉपीराइट © 1958, 1960, 1972 जे.बी. फिलिप्स द्वारा। सर्वाधिकार सुरक्षित।

इक्वेवेशन्स प्रेस द्वारा प्रकाशित आईएसबीएन 13: 978-0-9846967-2-7

समर्पण।

यह पुस्तक रिचेस इन क्राइस्ट परिवार को समर्पित है।

आपके प्रेम, मित्रता, प्रार्थनाओं और सहयोग के बिना, यह पुस्तक संभव नहीं होती।

धन्यवाद।

परमेश्वर को और अधिक पूर्ण रूप से जानने और उनका और अधिक सही रूप से प्रतिनिधित्व

करने की हमारी भूख निरंतर बढ़ती रहे।

विषयसूची

परिचय

भाग एक: *क्यों* और *क्या* के प्रश्नों का उत्तर

अध्याय 1 क्यों का प्रश्न	8
अध्याय 2 दुख और बड़ी तस्वीर	20
अध्याय 3 परमेश्वर का प्रेम और हमारी परिस्थितियाँ	30
अध्याय 4 परमेश्वर अपने पुत्रों और पुत्रियों से प्रेम करता है	39
अध्याय 5 <i>क्या</i> का प्रश्न	46
अध्याय 6 <i>क्या</i> के प्रश्न का सही उत्तर	53
अध्याय 7 यूसुफ की कहानी	60
अध्याय 8 मूसा और इस्राएल की कहानी	68

भाग दो: हमें क्या करना चाहिए और क्यों?

अध्याय 9 उचित प्रतिक्रिया	79
अध्याय 10 कठिनाइयों के प्रति सही दृष्टिकोण	88
अध्याय 11 प्रतिक्रिया दें, प्रतिक्रिया न करें	97

निष्कर्ष	105
----------------	-----

परिचय

जब कठिनाइयाँ हमारे जीवन में आती हैं, तो स्वाभाविक रूप से दो प्रश्न उठते हैं: यह क्यों हुआ? परमेश्वर क्या कर रहा है? यदि हम इन प्रश्नों का सही उत्तर नहीं दे पाते, तो हमारे कठिन समय और भी अधिक कठिन हो जाते हैं। गलत उत्तर भ्रम उत्पन्न करते हैं और स्वयं कठिनाइयों के ऊपर अतिरिक्त भावनात्मक पीड़ा जोड़ देते हैं।

- लोग उन कठिनाइयों के कारण परमेश्वर से क्रोधित और कटु हो जाते हैं जिनका वे सामना करते हैं, और इस संघर्ष में पड़ जाते हैं कि एक प्रेमी परमेश्वर ऐसी बात की अनुमति कैसे दे सकता है।

- कुछ व्यक्ति इस चिंता में पड़े रहते हैं कि क्या परमेश्वर उनकी परीक्षा ले रहा है या उन्हें कुछ सिखा रहा है, और वे व्याकुल होकर यह समझने का प्रयास करते हैं कि प्रभु उनके इस कष्ट के माध्यम से कौन-सा संदेश भेज रहा है।

- अन्य लोग सोचते हैं कि क्या उनकी परिस्थिति परमेश्वर की ओर से दंड है, और इस पीड़ा में तड़पते रहते हैं कि उन्होंने ऐसा कौन-सा कार्य किया होगा जिसके कारण वे ऐसी क्लेश का पात्र बने।

किन्तु बाइबल के अनुसार, विपत्ति परमेश्वर की ओर से नहीं आती। यह पतित संसार के जीवन का एक भाग है। यद्यपि परमेश्वर जीवन की चुनौतियों को आरंभ नहीं करता, फिर भी वह उनका उपयोग भलाई के लिए करता है और उन्हें अपने उद्देश्यों की पूर्ति में लगाता है।

इस पुस्तक में हम यह जांच करेंगे कि बाइबल इस विषय में क्या कहती है कि बुरी बातें क्यों होती हैं और कठिन समय के बीच परमेश्वर क्या करता है, ताकि हम इन महत्वपूर्ण प्रश्नों का सही उत्तर दे सकें। सही उत्तर हमें जीवन के संघर्षों का सामना इस प्रकार करने में सहायता करेंगे जिससे परमेश्वर का आदर हो और हमें विजय प्राप्त हो।

भाग एक



क्यों और क्या के प्रश्नों का उत्तर



क्यों का प्रश्न

जब अप्रत्याशित विपत्ति का सामना होता है, तो संभवतः पहला प्रश्न जो लोग पूछते हैं, वह है—यह क्यों हुआ? यद्यपि “क्यों” पूछना एक स्वाभाविक प्रतिक्रिया है, फिर भी यह सबसे अच्छा प्रश्न नहीं है, क्योंकि यह परमेश्वर पर हमारे भरोसे को कमजोर कर सकता है। चाहे हम इसे समझें या नहीं, जब हम “क्यों” पूछते हैं, तो हम यह संकेत देते हैं कि हमारी कठिनाई को होने देने में परमेश्वर ने हमारे साथ अन्याय किया है।

हमें इस प्रकार के विचारों के लिए द्वार बंद करना सीखना चाहिए। ऐसी सोच उसी समय प्रभु पर हमारे विश्वास को क्षीण करती है, जब हमें सहायता के लिए उसकी ओर मुड़ने की सबसे अधिक आवश्यकता होती है। यदि हम यह मानते हैं कि हमारी दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति के पीछे किसी भी प्रकार से परमेश्वर का हाथ है, तो फिर जब हम उस परिस्थिति का सामना कर रहे हों, तब उसकी सहायता के विषय में हम कैसे निश्चित हो सकते हैं?

अंततः परमेश्वर के विरुद्ध सभी आरोपों के पीछे शैतान ही है, क्योंकि वह हमारे स्वर्गीय पिता पर हमारी निर्भरता को कमजोर करना चाहता है। उसने आदम और हव्वा के साथ भी यही किया। उसने प्रभु के विरुद्ध आरोप लगाकर उन्हें परमेश्वर की आज्ञा का उल्लंघन करने के लिए उकसाया। शैतान ने हव्वा से कहा कि परमेश्वर ने उसे और आदम को भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष का फल खाने से इसलिए रोका है क्योंकि वह उनसे कुछ छिपाकर रखना चाहता है।

“तुम नहीं मरोगे (यदि तुम इसे खाओगे),” सर्प ने फुसफुसाकर कहा। “परमेश्वर जानता है कि जिस दिन तुम इसे खाओगे, तुम्हारी आँखें खुल जाएँगी। तुम परमेश्वर के समान हो जाओगे, भले और बुरे दोनों का ज्ञान रखते हुए, सब कुछ जानने वाले” (उत्पत्ति अध्याय 3 आयत 4 से 5)।

आज भी शैतान लोगों के साथ यही रणनीति अपनाता है। वह यह दावा करके परमेश्वर की भलाई को चुनौती देता है कि जीवन की कठिनाइयों और दुखों के पीछे प्रभु का हाथ है। परन्तु परमेश्वर कभी भी तुम्हारी पीड़ाओं का स्रोत या कारण नहीं है।

विपत्ति के समय यह पूछना गलत नहीं है: यह क्यों हुआ? किन्तु तुम्हें उस प्रश्न का सही उत्तर पवित्रशास्त्र के अनुसार देने में सक्षम होना चाहिए। अन्यथा, तुम शैतान की चालों के प्रति असुरक्षित हो जाओगे।

बुरी बातें क्यों होती हैं? दुखद, पीड़ादायक, विनाशकारी और कठिन परिस्थितियाँ उस पृथ्वी पर जीवन का हिस्सा हैं जो पाप के कारण क्षतिग्रस्त हो चुकी है। “क्यों” के प्रश्न का यही सही उत्तर है।

पृथ्वी पर एक शाप।

जब हम बाइबल का अध्ययन करते हैं, तो हम पाते हैं कि मृत्यु और भ्रष्टता सृष्टि में पहले मनुष्य के पाप के द्वारा प्रवेश कर गई। परमेश्वर ने आदम को आज्ञा दी थी कि वह निषिद्ध वृक्ष का फल न खाए, परन्तु उसने उस आज्ञा का उल्लंघन किया। आदम के इस निर्णय के मानवजाति और पृथ्वी के लिए गहरे परिणाम हुए।

“जब आदम ने पाप किया, तो पाप पूरी मानवजाति में प्रवेश कर गया। उसके पाप के द्वारा मृत्यु पूरे संसार में फैल गई, जिससे सब कुछ पुराना होने लगा और मरने लगा” (रोमियों अध्याय 5 आयत 12)।

“(परमेश्वर ने कहा) तेरे कारण भूमि शापित है (आदम); तू जीवन भर परिश्रम करके उससे भोजन प्राप्त करेगा” (उत्पत्ति अध्याय 3 आयत 17)। “वह तेरे लिए काँटे और ऊँटकटारे उत्पन्न करेगी, और तू खेत की उपज खाएगा। अपने जीवन भर तू पसीना बहाकर उस पर अधिकार करने का प्रयास करेगा, अपनी मृत्यु के दिन तक। फिर तू उसी मिट्टी में लौट जाएगा जिससे तू लिया गया था” (उत्पत्ति अध्याय 3 आयत 18 से 19)।

आदम के पाप के कारण मृत्यु का शाप पृथ्वी में प्रवेश कर गया और भौतिक संसार क्षय के अधीन हो गया। इसका अर्थ है कि यदि तुम रसोई के काउंटर पर एक आड़ू रख छोड़ो, तो वह अंततः सड़ जाएगा। इसलिए नहीं कि परमेश्वर ने आड़ुओं को सड़ने के लिए बनाया था, बल्कि उस पहले पाप के प्रभावों के कारण। आदम और हव्वा के पाप ने उन प्राकृतिक नियमों और प्रक्रियाओं को भ्रष्ट कर दिया जिन्हें परमेश्वर ने समय के आरंभ में स्थापित किया था।

इस परिवर्तन के परिणामस्वरूप संसार भर में फसल का नाश, सूखा, अकाल, विनाशकारी तूफान और भूकंप उत्पन्न हुए।

आदम की आज्ञा न मानने के प्रभाव ने मानवजाति को भी प्रभावित किया और मनुष्यों में पापी स्वभाव उत्पन्न किया (रोमियों अध्याय 5 आयत 19)। इसके परिणाम शीघ्र ही स्पष्ट हो गए। आदम और हव्वा के पहिलौठे पुत्र कैन ने उनके दूसरे पुत्र हाबिल की हत्या कर दी, और फिर उसके विषय में परमेश्वर से झूठ बोला। बुराई की ओर यह झुकाव हर आने वाली पीढ़ी में स्वयं को प्रकट करता रहा।

इसके अतिरिक्त, जब आदम प्रलोभन में पड़ गया, तो उसने पृथ्वी पर परमेश्वर द्वारा दी गई अपनी अधिकारिता शैतान को सौंप दी और पृथ्वी की सामर्थ्य की व्यवस्था को बदल दिया। शैतान इस संसार का देवता बन गया (उत्पत्ति अध्याय 1 आयत 26 से 28; लूका अध्याय 4 आयत 6 और 2 कुरिन्थियों अध्याय 4 आयत 4)। तब से वह पृथ्वी पर घूमता फिरता है, पुरुषों और स्त्रियों को परमेश्वर के विरुद्ध विद्रोह में अपने पीछे चलने के लिए बहकाकर उन्हें नष्ट करने की खोज में लगा रहता है (1 पतरस अध्याय 5 आयत 8; इफिसियों अध्याय 6 आयत 11 से 12)।

आदम के पाप के परिणामस्वरूप, सभी मनुष्य एक पतित संसार में जन्म लेते हैं। इसका अर्थ है कि हम सभी को प्रतिदिन उन परिवर्तनों का सामना करना पड़ता है जो हमारे प्रथम माता-पिता के पाप के कारण सृष्टि में उत्पन्न हुए। खरपतवार, क्षय, प्राकृतिक आपदाएँ और मृत्यु वर्तमान में पृथ्वी की संरचना का भाग हैं। हमारे पास नश्वर शरीर हैं जो बीमारी, बुढ़ापे और मृत्यु के अधीन हैं। हम ऐसे लोगों के साथ संपर्क में रहते हैं जो अविवेकपूर्ण और पापपूर्ण निर्णय लेते हैं, जो सीधे हमारे जीवन को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर सकते हैं। इन सभी कारणों से इस पृथ्वी पर जीवन श्रमसाध्य बन जाता है।

क्या यह परमेश्वर है या शैतान?

बहुत से लोगों की यह धारणा है कि जो कुछ भी होता है, उसका कोई प्रत्यक्ष और तत्काल कारण होता है। या तो परमेश्वर ने किया है या शैतान ने किया है। किन्तु कठिन परिस्थितियाँ परमेश्वर का कार्य नहीं हैं और आवश्यक नहीं कि वे शैतान का ही कार्य हों। वे केवल पाप से शापित पृथ्वी पर जीवन का एक हिस्सा हैं।

परमेश्वर जीवन की परेशानियों और परीक्षाओं की योजना नहीं बनाता। हम यह बात उस बात से जानते हैं जो यीशु हमें परमेश्वर के विषय में दिखाता है। जब हम नए नियम में पृथ्वी पर यीशु के समय के वृत्तांतों (सुसमाचारों) को पढ़ते हैं, तो हम पाते हैं कि उसने लोगों की परीक्षा लेने के लिए परिस्थितियाँ उत्पन्न नहीं कीं, न ही व्यक्तियों को सिखाने या मजबूत करने के लिए परीक्षाएँ और तूफान भेजे। उसने पुरुषों को अनुशासित करने के लिए बैलगाड़ी या गधे की गाड़ी की दुर्घटनाएँ नहीं कराईं। उसने किसी को बीमार नहीं किया और न ही सहायता के लिए उसके पास आने वाले किसी व्यक्ति को चंगा करने से इंकार किया। यदि यीशु परेशानियाँ उत्पन्न नहीं करता, तो हम जानते हैं कि परमपिता परमेश्वर भी ऐसा नहीं करता, क्योंकि यीशु वही करता है जो वह पिता को करते हुए देखता है।

“(यीशु ने कहा) मैं तुम से सच सच कहता हूँ, पुत्र अपने आप से कुछ नहीं कर सकता; वह केवल वही कर सकता है जो वह अपने पिता को करते हुए देखता है, क्योंकि जो कुछ पिता करता है, वही पुत्र भी करता है। क्योंकि पिता पुत्र से प्रेम करता है और जो कुछ वह स्वयं करता है, वह सब उसे दिखाता है” (यूहन्ना अध्याय 5 आयत 19 से 20)।

जब यीशु के चेलों ने उससे कहा कि वह उन्हें पिता को दिखाए, तो उसने उत्तर दिया: “जिसने मुझे देखा है उसने पिता को देखा है” (यूहन्ना अध्याय 14 आयत 9)। यीशु ने उन्हें पिता को इस प्रकार प्रकट किया कि उसने पिता के वचन बोले और पिता के कार्य किए, उस पिता की सामर्थ्य के द्वारा जो उसमें वास करती थी। (इन कथनों से उठने वाले विषयों की पूरी चर्चा के लिए मेरी पुस्तक *परमेश्वर अच्छा है... और अच्छा मतलब अच्छा है* पढ़ें।)

शैतान भी प्रत्येक दुखद घटना के लिए सीधे तौर पर जिम्मेदार नहीं है। निश्चय ही, ब्रह्मांड का पहला विद्रोही होने के नाते, जिसने आदम और हव्वा को पाप में गिरने के लिए बहकाया, इस संसार के नरक जैसे दुखों और हृदय-पीड़ा के पीछे अंततः शैतान ही है। किन्तु वह हमारे जीवन की हर प्रतिकूल घटना को स्वयं उत्पन्न नहीं करता। बाइबल कहीं भी मसीहियों से यह नहीं कहती कि वे शैतान की शक्ति से सावधान रहें। बल्कि, यह हमें उसकी मानसिक युक्तियों के प्रति सतर्क रहने की शिक्षा देती है, क्योंकि वह मानव व्यवहार को प्रभावित करने का प्रयास करता है। शैतान उन मनुष्यों के पतित स्वभाव के द्वारा कार्य करता है जिन्होंने स्वयं को परमेश्वर के अधीन नहीं किया है, और वह उन लोगों के मन में झूठ बोलता है जो उसकी चालों से अनजान हैं।

“(शैतान) वही आत्मा है जो उन लोगों के हृदयों में कार्य कर रही है जो परमेश्वर की आज्ञा मानने से इंकार करते हैं” (इफिसियों अध्याय 2 आयत 2)।

“परन्तु मुझे डर है कि कहीं तुम्हारे मन तुम्हारे मसीह के प्रति सच्चे और शुद्ध समर्पण से भटका न दिए जाएँ, जैसे हव्वा सर्प (शैतान) की बुरी चालों से धोखा खा गई थी” (2 कुरिन्थियों अध्याय 11 आयत 3)।

“परमेश्वर के सारे हथियार बाँध लो, ताकि तुम शैतान की युक्तियों के विरुद्ध दृढ़ खड़े रह सको” (इफिसियों अध्याय 6 आयत 11)।

कुछ बातें बस घटित हो जाती हैं।

हमें यह समझना चाहिए कि बहुत-सी बातें बस यूँ ही घटित हो जाती हैं। हमने पहले उल्लेख किया था कि आदम की आज्ञा न मानने से उन प्राकृतिक नियमों और प्रक्रियाओं पर प्रभाव पड़ा जिन्हें परमेश्वर ने सृष्टि के समय स्थापित किया था। यद्यपि पाप के शाप के कारण ये नियम बदल गए हैं, फिर भी वे कार्य करते रहते हैं और कभी-कभी विपत्ति तथा विनाश का परिणाम उत्पन्न करते हैं। उदाहरण के लिए:

- परमेश्वर ने गुरुत्वाकर्षण को मानवजाति के आशीष के लिए बनाया। परन्तु गुरुत्वाकर्षण का नियम अक्सर चोट या मृत्यु का कारण बन जाता है जब नश्वर शरीर वाले लोग अज्ञानता या लापरवाही के कारण उस नियम का उल्लंघन करते हैं। यह परमेश्वर ने नहीं किया। यह शैतान ने नहीं किया। यह इसलिए हुआ क्योंकि पाप से शापित पृथ्वी पर जीवन ऐसा ही है।

- परमेश्वर ने वृक्षों को मानवजाति के आशीष के लिए बनाया। परन्तु बड़े वृक्ष कभी-कभी भयंकर तूफानों में गिर जाते हैं और गाड़ियों तथा घरों को कुचल देते हैं। क्यों? क्योंकि विनाशकारी तूफान (भ्रष्ट प्राकृतिक प्रक्रियाओं के परिणाम) उन वृक्षों को गिरा देते हैं जो बीमारी और वृद्धावस्था के कारण कमजोर हो चुके होते हैं (जो सृष्टि में मृत्यु के शाप के ही परिणाम हैं)। यह परमेश्वर ने नहीं किया। यह शैतान ने नहीं किया। यह केवल एक पतित संसार में जीवन का हिस्सा है।

आप लोगों को यह कहते सुनते हैं: “जीवन में कोई संयोग नहीं होता। हर बात किसी कारण से होती है।” ये कथन सामान्य हो सकते हैं, परन्तु सत्य नहीं हैं। यीशु के अनुसार, कुछ बातें वास्तव में संयोगवश भी होती हैं। उसने यह बात तब स्पष्ट की जब वह उस व्यक्ति के बारे में बता रहा था जिस पर एक खतरनाक मार्ग पर यात्रा करते समय डाकुओं ने आक्रमण किया। दो धार्मिक अगुवे उस घायल व्यक्ति के पास से गुज़रे और उसे छोड़ दिया, परन्तु एक भले सामरी ने रुककर उसकी सहायता की। ध्यान दीजिए, जब यीशु ने इस घटना का वर्णन किया तो उसने एक बात विशेष रूप से बताई।

“एक व्यक्ति यरूशलेम से यरीहो को जा रहा था, और डाकुओं के हाथ पड़ गया, जिन्होंने उसके कपड़े उतार लिए, उसे घायल किया, और उसे अधमरा छोड़कर चले गए। और संयोग से एक याजक उसी मार्ग से जा रहा था; और जब उसने उसे देखा, तो दूसरी ओर से निकल गया” (लूका अध्याय 10 आयत 30 से 31)।

ध्यान दीजिए, यीशु ने कहा कि उस दिन उस याजक का वहाँ होना संयोगवश था। नया नियम मूल रूप से यूनानी भाषा में लिखा गया था। जिस शब्द का अनुवाद “संयोग” किया गया है, उसका अर्थ है “दुर्घटनावश” या “इतिफाक।” “अब इतिफाक से एक याजक उस मार्ग से नीचे जा रहा था।” वेब्स्टर शब्दकोश के अनुसार, इतिफाक का अर्थ है दो बातों का एक ही समय पर दुर्घटनावश, अनजाने में या अप्रत्याशित रूप से घटित होना। संयोग इस बात से संबंधित है कि घटनाएँ किस प्रकार घटित होती हैं। यह संभावना को दर्शाता है।

यदि तुम एक सिक्का हवा में उछालो, तो संभावना है कि वह चित गिरेगा या पट। दो अलग-अलग संभावित परिणाम क्यों हैं? कई ऐसे कारक हैं जो बदल सकते हैं और अंतिम परिणाम को प्रभावित कर सकते हैं, जिनमें यह शामिल है कि सिक्का कितनी जोर से उछाला गया, ऊपर उठते और नीचे गिरते समय उसकी गति क्या थी, और उछाल के समय हवा की गति कितनी थी। यदि इन तत्वों में से कोई भी थोड़ा-सा भी बदल जाए, तो वह अंतिम परिणाम को प्रभावित करेगा।

यीशु द्वारा बताई गई कहानी में भी कई ऐसे कारक थे जो इस घटना के घटित होने के तरीके को बदल सकते थे। यदि इसमें शामिल कोई भी व्यक्ति किसी और दिन यात्रा करता, तो परिणाम बदल जाता। यदि डाकुओं ने लोगों पर हमला करने के लिए कोई दूसरा मार्ग चुना होता, तो उस दिन वहाँ कोई अपराध न होता। यदि घायल व्यक्ति सड़क से दिखाई न देने वाली किसी खाई में गिर गया होता, तो भले सामरी ने शायद उसे न देखा होता। यदि याजक या सामरी का लोगों की सहायता करने के प्रति अलग दृष्टिकोण होता, तो यह घटना भिन्न रूप से समाप्त होती। यही संयोग है।

किसी भी दिए गए क्षण में घटनाओं को अनेक परिवर्तनीय कारक प्रभावित करते हैं—जैसे चुनाव, समय, दृष्टिकोण और पर्यावरणीय परिस्थितियाँ, कुछ उदाहरणों के रूप में। इसलिए, इस जीवन में बहुत-सी बातें संयोगवश घटित होती हैं। अनेक घटनाएँ आकस्मिक होती हैं। आकस्मिक का अर्थ है “बेतरतीब” या “योजना अथवा अभिकल्पना के बजाय दुर्घटनावश निर्धारित।” यदि मेरी गाड़ी किसी कील पर चढ़ जाए और मेरा टायर खराब हो जाए, तो वह एक दुर्घटना या आकस्मिक घटना है। मैंने टायर के खराब होने की योजना नहीं बनाई थी और न ही उसकी अपेक्षा की थी। यह इसलिए हुआ क्योंकि कुछ कारक संयोगवश एक साथ आ गए—उस सड़क पर जाने का मेरा निर्णय, सड़क पर कील की उपस्थिति और उसका स्थान, और जब मैं उस कील के पास पहुँचा तब टायर की स्थिति। इस जीवन में बहुत-सी

बातें बस यूँ ही घटित हो जाती हैं—आकस्मिक रूप से, दुर्घटनावश या संयोग से—क्योंकि पाप से शापित संसार में जीवन ऐसा ही है।

आगे बढ़ने से पहले, हमें कुछ ऐसे विषयों पर विचार करना होगा जो अब तक की बातों के आधार पर उठ सकते हैं। आप सोच सकते हैं कि जब एक सार्वभौम परमेश्वर इस ब्रह्मांड पर राज्य करता है, तो आकस्मिक घटनाएँ कैसे हो सकती हैं। आकस्मिक घटनाओं की उपस्थिति किसी भी प्रकार से परमेश्वर की सार्वभौमिकता को कम नहीं करती। यह तथ्य कि परमेश्वर सार्वभौम है, इसका अर्थ है कि वह सर्वशक्तिमान है और सर्वोच्च अधिकार रखता है।

क्योंकि परमेश्वर सार्वभौम है, इसलिए वह पाप से क्षतिग्रस्त संसार में जीवन की संयोगवश घटित होने वाली घटनाओं का उपयोग कर सकता है और उन्हें अपने उद्देश्यों की पूर्ति में लगा सकता है। थोड़ी देर में हम इस विषय पर और अधिक विस्तार से चर्चा करेंगे।

आपको यह चिंता भी हो सकती है कि जो बातें मैंने अब तक कही हैं, उनका अर्थ यह है कि जीवन की आकस्मिकता और संयोग से कोई सुरक्षा नहीं है। इस पुस्तक में आगे मैं कुछ ऐसी बातें कहूँगा जो इस विषय पर समझ प्रदान करेंगी। अभी के लिए, इन विचारों पर ध्यान दीजिए:

- इस संसार की वर्तमान अवस्था में परेशानी-रहित जीवन जैसी कोई बात नहीं है। हम सभी समस्याओं और परीक्षाओं का सामना करते हैं। परन्तु जब हम जीवन की कठिनाइयों के बीच से होकर गुजरते हैं, तब परमेश्वर की अगुवाई, प्रबंध और सुरक्षा हमारे लिए उपलब्ध हैं।

- स्वयं यीशु ने कहा, “संसार में तुम्हें क्लेश, परीक्षाएँ, संकट और निराशाएँ मिलेंगी; परन्तु हियाव बाँधो—साहस रखो, विश्वास से भरे रहो, निश्चिंत और अडिग रहो—क्योंकि मैंने संसार पर जय पाई है। मैंने उसकी हानि पहुँचाने की शक्ति छीन ली है; मैंने उसे [तुम्हारे लिए] जीत लिया है” (यूहन्ना अध्याय 16 आयत 33)।

हाँ, लेकिन परमेश्वर ने इसकी अनुमति दी।

“परमेश्वर ने इसकी अनुमति दी” इस वाक्यांश का गलत उपयोग इस संसार में कठिनाइयों और पीड़ा के स्रोत के विषय में हमारी समझ को और अधिक जटिल बना देता है। अच्छा होगा कि हम इस वाक्यांश को अपनी शब्दावली से हटा दें, क्योंकि इसके साथ कुछ गलत अर्थ जुड़े हुए हैं। जब कुछ बुरा होता है, तो लोग अक्सर कहते हैं कि भले ही परमेश्वर ने उस घटना को उत्पन्न न किया हो, पर उसने उसकी अनुमति तो दी। इस कथन में यह विचार छिपा होता है कि क्योंकि परमेश्वर ने उस नकारात्मक परिस्थिति को होने से नहीं रोका, इसलिए वह किसी न किसी रूप में उसके पीछे है या उसे स्वीकृति दे रहा है। किन्तु बहुत-सी बातें ऐसी हैं जिन्हें परमेश्वर नहीं रोकता, इसलिए नहीं कि वह उन्हें स्वीकार करता है, बल्कि इसलिए कि संसार की व्यवस्था इसी प्रकार स्थापित है।

जब परमेश्वर ने मानवजाति की रचना की, तब उसने मनुष्यों को स्वतंत्र इच्छा दी, जिससे परमेश्वर के विरुद्ध जानबूझकर आज्ञा न मानने की संभावना उत्पन्न हुई। इस संसार में लोग नियमित रूप से पाप करते हैं और अनैतिकता तथा हिंसा के भयानक कार्य करते हैं। यद्यपि परमेश्वर किसी भी प्रकार से इस आज्ञा उल्लंघन के पक्ष में नहीं है और न ही इसके पीछे है, फिर भी वह हस्तक्षेप नहीं करता क्योंकि पुरुषों और स्त्रियों को चुनाव करने की स्वतंत्रता दी गई है।

प्रारंभिक चुनावों के अतिरिक्त, स्वतंत्र इच्छा उन चुनावों के परिणाम भी साथ लाती है। बहुत-सी बातें मनुष्यों की पापपूर्ण गतिविधियों के कारण घटित होती हैं—ऐसी घटनाएँ जो परमेश्वर को अप्रसन्न करती हैं और उसकी इच्छा के विपरीत हैं। परन्तु यदि परमेश्वर पुरुषों और स्त्रियों के जानबूझकर किए गए कार्यों के परिणामों को मिटा दे या कम कर दे, तो मानवजाति के पास वास्तव में स्वतंत्र इच्छा नहीं रह जाएगी।

आदम, जो स्वतंत्र इच्छा प्राप्त करने वाला पहला मनुष्य था, उसने पाप करने का चुनाव किया। जैसा कि हमने इस अध्याय में पहले चर्चा की, उसकी आज्ञा न मानने के परिणामस्वरूप पृथ्वी पर विनाशकारी प्रभाव उत्पन्न हुए—ऐसे परिणाम जिनका सामना हम आज भी कर रहे हैं। जब कोई भयंकर तूफान किसी नगर को तबाह कर देता है, तो यह इसलिए नहीं कि परमेश्वर ने इसकी अनुमति दी। ऐसा विनाश आदम की स्वतंत्र इच्छा के चुनाव का फल है।

ब्रह्मांड की सबसे महान सामर्थ्य होने के नाते, परमेश्वर संभावित रूप से हर पाप और पाप के हर प्रभाव को रोक सकता है, जिसमें आदम का पाप भी शामिल है। किन्तु उसने स्वयं को मानव के चुनाव और उनके परिणामों तक सीमित करने का निर्णय लिया है। आगे के एक अध्याय में, मैं इस विषय पर चर्चा करूँगी कि प्रभु किस प्रकार चुनावों और उनके परिणामों का उपयोग करता है, यहाँ तक कि उन बातों का भी जो उसकी इच्छा के विपरीत हैं।

परमेश्वर का एक उद्देश्य है।

“परमेश्वर का एक उद्देश्य है” यह एक और वाक्यांश है जिसका लोग गलत उपयोग करते हैं जब क्लेश उनके जीवन में आता है। ये शब्द यह संकेत देते हैं कि उनकी परेशानी किसी प्रकार से उनके लिए परमेश्वर की इच्छा है। यह विचार गलत है क्योंकि यह उस बात के विपरीत है जो यीशु हमें परमेश्वर के विषय में दिखाता है। यीशु ने केवल वही किया जो उसने अपने पिता को करते हुए देखा, और उसने स्पष्ट रूप से अपने कार्यों की तुलना विनाशकारी और हानिकारक घटनाओं से की: “चोर केवल चोरी करने, हत्या करने और नाश करने आता है, परन्तु मैं (यीशु) इसलिए आया हूँ कि वे जीवन पाएँ—और भरपूरी का जीवन पाएँ” (यूहन्ना अध्याय 10 आयत 10)। उसका यह कथन स्पष्ट करता है कि यदि कोई बात मारती है, चुराती है या नष्ट करती है, तो वह यीशु या उसके पिता की ओर से नहीं है।

चूँकि विपत्ति परमेश्वर की ओर से नहीं आती, इसलिए उसमें परमेश्वर का कोई उद्देश्य नहीं हो सकता। फिर भी, केवल इसलिए कि पीड़ादायक परिस्थितियों में परमेश्वर का कोई उद्देश्य नहीं है, इसका अर्थ यह नहीं कि उसका कोई उद्देश्य ही नहीं है। वेबस्टर शब्दकोश के अनुसार, उद्देश्य का अर्थ है “कुछ ऐसा जो प्राप्त किए जाने वाले लक्ष्य के रूप में निर्धारित किया गया हो।” बाइबल हमें बताती है कि पृथ्वी की रचना करने से पहले ही परमेश्वर के पास एक योजना और एक उद्देश्य था।

रोमियों अध्याय 8 आयत 28 उन लोगों के विषय में कहता है “जो उसकी (परमेश्वर की) योजना के अनुसार बुलाए गए हैं।” यह अंश आगे उस उद्देश्य को प्रकट करता है: “क्योंकि परमेश्वर ने अपने पूर्वज्ञान में (हमें) अपने पुत्र के स्वरूप के समान होने के लिए चुना, ताकि वह बहुत से भाइयों के परिवार में पहिलौठा ठहरे” (रोमियों अध्याय 8 आयत 29)।

सृष्टि से पहले से ही परमेश्वर की इच्छा थी और है कि उसका एक परिवार हो। हमें परमेश्वर के पुत्र और पुत्रियाँ बनने के लिए बुलाया गया है।

जब यीशु ने कुंवारी मरियम के गर्भ में देह धारण की, तब वह पूर्ण रूप से मनुष्य बना बिना पूर्ण रूप से परमेश्वर होना छोड़े। पृथ्वी पर अपने वर्षों के दौरान, यीशु ने परमेश्वर के रूप में अपने अधिकारों और विशेषाधिकारों को एक ओर रख दिया और परमपिता परमेश्वर पर निर्भर रहते हुए एक मनुष्य के रूप में जीवन व्यतीत किया। ऐसा करके उसने हमें दिखाया कि परमेश्वर के पुत्र कैसे दिखाई देते हैं और कैसे आचरण करते हैं।

फिर यीशु क्रूस पर गया और हमारे पापों के लिए हमारे स्थान पर मर गया। उसकी मृत्यु और पुनरुत्थान ने यह संभव बनाया कि जब हम उसमें और उसके बलिदान में विश्वास रखें, तो हम परमेश्वर की संतान बन सकें। रोमियों अध्याय 8 आयत 30 उस प्रक्रिया का वर्णन करता है जिसके द्वारा परमेश्वर अपने उस उद्देश्य को पूरा करता है कि ऐसी संतान उत्पन्न करे जो यीशु के समान हो।

“और जिन्हें उसने पहले से ठहराया, उन्हें उसने बुलाया भी; और जिन्हें बुलाया, उन्हें धर्मी भी ठहराया—अर्थात् दोषमुक्त किया, धर्मी बनाया, और अपने साथ सही संबंध में स्थापित किया। और जिन्हें धर्मी ठहराया, उन्हें महिमा भी दी—उन्हें स्वर्गीय गरिमा और दशा में उठाया” (रोमियों अध्याय 8 आयत 30)।

इस छोटी पुस्तक में हम विस्तार से यह नहीं समझा सकते कि परमेश्वर किस प्रकार मनुष्यों को धर्मी ठहराकर और महिमा देकर उन्हें यीशु के स्वरूप में ढालता है। इतना कहना पर्याप्त है कि परमेश्वर अपनी योजना को क्रूस के द्वारा पूरा करता है, जिसने मनुष्य के पाप का ऋण चुका दिया और उसके आत्मा के लिए मनुष्यों में कार्य करने तथा उन्हें परिवर्तित करने का मार्ग खोल दिया। परमेश्वर का किसी वाहन दुर्घटना या बीमारी में कोई छिपा हुआ उद्देश्य नहीं है। समय के आरंभ से ही उसका उद्देश्य यह रहा है कि उद्धार की प्रक्रिया के द्वारा पापी मनुष्यों को यीशु के समान पुत्र बनाए।

जिन घटनाओं को हम समझ नहीं पाते, उनमें अर्थ खोजने और उन्हें समझने के अपने प्रयास में, हम अक्सर विशेष परिस्थितियों में परमेश्वर के उद्देश्य को ढूँढ़ने लगते हैं। परन्तु

परमेश्वर का लक्ष्य किसी एक घटना से कहीं बड़ा है। उसकी अनन्त योजना यह है कि उसका एक ऐसा परिवार हो जिसमें पुत्र और पुत्रियाँ हों जो चरित्र, सामर्थ्य, पवित्रता और प्रेम में यीशु के समान हों। परमेश्वर क्रूस की सामर्थ्य के द्वारा प्राप्त एक परिवार चाहता है।

हमने पहले रोमियों अध्याय 8 आयत 28 का केवल एक भाग उद्धृत किया था। पूरा पद कहता है: “और हम जानते हैं कि जो लोग परमेश्वर से प्रेम रखते हैं, जो उसकी योजना के अनुसार बुलाए गए हैं, उनके लिए परमेश्वर सब बातों को मिलाकर भलाई ही उत्पन्न करता है” (रोमियों अध्याय 8 आयत 28)।

यह अंश हमें आश्वासन देता है कि परमेश्वर उन सब बातों को भी—जिनमें उसका कोई उद्देश्य नहीं है—अपनी उस योजना की पूर्ति में लगा सकता है जिसका उद्देश्य एक परिवार एकत्र करना है। क्योंकि वह सार्वभौम है, परमेश्वर आकस्मिक घटनाओं और पापपूर्ण चुनावों को भी लेकर उन्हें अपनी उस योजना को आगे बढ़ाने के लिए उपयोग कर सकता है जिसमें वह पुत्रों और पुत्रियों को प्राप्त करना चाहता है। और जब वह ऐसा करता है, तो वह वास्तविक बुराई में से भी महान भलाई उत्पन्न करता है। आने वाले अध्यायों में मैं इस सिद्धांत को और अधिक विस्तार से समझाऊँगी।



आप शायद यह सोच रहे होंगे: “यदि परमेश्वर हमारी परीक्षाओं का स्रोत नहीं है, तो वह जीवन की विपत्तियों में और अधिक हस्तक्षेप क्यों नहीं करता? आखिरकार, वह केवल सामर्थ्य ही नहीं, बल्कि प्रेमी और करुणामय भी है।” अगले कुछ अध्याय हमें और अधिक समझ प्रदान करेंगे, क्योंकि हम “क्यों” के प्रश्न का उत्तर देना जारी रखेंगे।



दुख और बड़ी तस्वीर

जब लोग “क्यों” पूछते हैं, तो वे सामान्यतः किसी विशेष परिस्थिति के संदर्भ में पूछ रहे होते हैं। “यह मेरे साथ क्यों हुआ?” “यह उनके साथ क्यों हुआ?” यदि आप मानवीय दुख और पीड़ा को अपनी विशेष परिस्थिति या किसी और की परिस्थिति से शुरू करके समझने का प्रयास करेंगे, तो आप परमेश्वर और उसके कार्य करने के तरीके के विषय में गलत निष्कर्ष निकाल सकते हैं। आपको बड़ी तस्वीर से आरंभ करना होगा और अपनी परिस्थितियों को परमेश्वर की समग्र योजना के संदर्भ में समझना होगा।

बड़ी तस्वीर।

अनन्तकाल में परमेश्वर ने एक योजना बनाई कि उसका एक परिवार हो। उसने पृथ्वी को अपने और अपने परिवार के लिए एक घर के रूप में बनाया। फिर उसने मनुष्यों की रचना इस उद्देश्य से की कि वे उसके पुत्र और पुत्रियाँ बनें। यही बड़ी तस्वीर है।

“बहुत पहले, संसार की रचना करने से भी पहले, परमेश्वर ने हमसे प्रेम किया और हमें मसीह में चुन लिया ताकि हम उसकी दृष्टि में पवित्र और निर्दोष हों। उसकी अटल योजना सदा से यही रही है कि वह हमें यीशु मसीह के द्वारा अपने पास लाकर अपने परिवार में गोद ले ले। और इससे उसे बड़ा आनंद मिला” (इफिसियों अध्याय 1 आयत 4 से 5)।

“उसने संसार को बसने के लिए बनाया, न कि उसे सूना और अराजक स्थान होने के लिए” (यशायाह अध्याय 45 आयत 18)।

“मैंने सिंहासन की ओर से एक ऊँची आवाज़ सुनी, जो कह रही थी, ‘देखो, परमेश्वर का निवास अब उसके लोगों के बीच है! वह उनके साथ रहेगा, और वे उसके लोग होंगे। स्वयं परमेश्वर उनके साथ होगा’” (प्रकाशितवाक्य अध्याय 21 आयत 3)।

“और मैं उनका परमेश्वर होऊँगा, और वे मेरी संतान होंगे” (प्रकाशितवाक्य अध्याय 21 आयत 7)।

जैसा कि हम पहले चर्चा कर चुके हैं, संसार और मानवजाति अपनी सृष्टि के बाद पाप के कारण क्षतिग्रस्त हो गए। परन्तु परमेश्वर इसके कारण आश्चर्यचकित नहीं हुआ। उसने मानवजाति की रचना यह जानते हुए की थी कि वे आज्ञा उल्लंघन के द्वारा उससे स्वतंत्रता का चुनाव करेंगे।

अपनी अनन्त योजना के भाग के रूप में, परमेश्वर ने इस विद्रोह और पृथ्वी पर आए मृत्यु के शाप का सामना करने का एक मार्ग तैयार किया। स्वयं परमेश्वर ने देह धारण की, पृथ्वी पर आया, और मनुष्यों के पापों के लिए मर गया। प्रकाशितवाक्य अध्याय 13 आयत 8 यीशु को “वह मेम्ना जो जगत की स्थापना से बलिदान किया गया” कहता है।

क्रूस पर, यीशु ने हमारे पाप को अपने ऊपर ले लिया ताकि उसे दूर करे और उसके द्वारा किए गए नुकसान को समाप्त करे। परिणामस्वरूप, जो कोई प्रभु यीशु मसीह के सामने अपना घुटना टेकता है और अपने पापों के लिए उसके बलिदान को स्वीकार करता है, वह परमेश्वर के मूल उद्देश्य में पुनः स्थापित हो जाता है। वे उसके पुत्र और पुत्रियाँ बन जाते हैं।

परमेश्वर का वर्तमान उद्देश्य।

इस समय परमेश्वर का मुख्य लक्ष्य यह नहीं है कि हर व्यक्ति का जीवन आसान और पीड़ारहित बना दे। उसका प्राथमिक उद्देश्य मनुष्यों को पाप से उद्धार तक लाना और मसीह में विश्वास के द्वारा उन्हें अपनी संतान बनाना है। परमेश्वर इस जीवन में होने वाली हर पीड़ा और अन्याय को रोकने की अपेक्षा मनुष्यों की अनन्त नियति के विषय में कहीं अधिक चिंतित है। यदि किसी व्यक्ति का वर्तमान जीवन पूर्ण और पीड़ारहित हो, परन्तु अपने पाप के कारण वह अन्ततः परमेश्वर से सदा के लिए अलग हो जाए, तो ऐसा अद्भुत जीवन भी व्यर्थ है।

एक बात पर विचार कीजिए जो यीशु ने एक दिन शिक्षा देते समय कही। भीड़ में से किसी ने उसे पुकारकर कहा कि वह उसके भाई को आदेश दे कि उनके पिता की संपत्ति में उसका हिस्सा बाँट दे। प्रभु ने उत्तर दिया: “सावधान रहो! जो तुम्हारे पास नहीं है उसके लिए लालच मत करो। वास्तविक जीवन इस बात से नहीं मापा जाता कि हमारे पास कितना है” (लूका अध्याय 12 आयत 15)।

फिर उसने एक दृष्टान्त सुनाया एक धनी व्यक्ति के विषय में, जिसके पास बहुत सफल खेत था, जिसने इतनी प्रचुर उपज उत्पन्न की कि उसके खलिहान भर गए। उस व्यक्ति ने निश्चय किया कि वह पुराने खलिहानों को गिराकर उनसे बड़े खलिहान बनाएगा।

“और मैं अपने आप से कहूँगा, मित्र, तेरे पास बहुत वर्षों के लिए बहुत कुछ जमा है। अब आराम कर! खा, पी और आनन्द मना! परन्तु परमेश्वर ने उससे कहा, ‘हे मूर्ख! आज ही रात तेरी जान ले ली जाएगी। तब जो कुछ तूने इकट्ठा किया है, वह किसका होगा?’ हाँ, वह व्यक्ति मूर्ख है जो पृथ्वी पर धन इकट्ठा करता है परन्तु परमेश्वर के साथ समृद्ध संबंध नहीं रखता” (लूका अध्याय 12 आयत 19 से 21)।

यद्यपि यीशु अपने उत्तर में विशेष रूप से लोभ के विषय को संबोधित कर रहा था, फिर भी हम अपनी चर्चा के लिए एक महत्वपूर्ण बात सीख सकते हैं। यीशु के अनुसार, यदि तुम्हारे पास एक अद्भुत, समस्यारहित जीवन हो, जिसमें इस संसार की सर्वोत्तम वस्तुएँ हों, परन्तु मसीह में विश्वास के द्वारा तुम्हारा परमेश्वर के साथ कोई संबंध न हो, तो जीवन का कोई अर्थ नहीं है।

पाप से शापित पृथ्वी पर जीवन की प्रकृति के कारण, लोग हृदय-पीड़ा और हानि का अनुभव करते हैं, और बहुत-सी आवश्यकताएँ तथा इच्छाएँ अधूरी रह जाती हैं। यदि तुम सफलता और बहुतायत का जीवन भी जी लो और अपने सारे सपने पूरे कर लो, तब भी बुढ़ापा और मृत्यु सब कुछ छीन लेते हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि इस जीवन में सहायता, आनन्द, प्रबंध और सुरक्षा का कोई प्रावधान नहीं है। है। परन्तु पृथ्वी पर जीवन तब तक पीड़ारहित या समस्यारहित नहीं होगा जब तक यीशु के दूसरे आगमन पर पाप और उसके प्रभावों का हर चिन्ह मिटा नहीं दिया जाता।

प्रकाशितवाक्य की पुस्तक के अंतिम दो अध्याय उन परिवर्तनों के विषय में बताते हैं जो यीशु के पृथ्वी पर लौटने पर होंगे। वे हमें उस जीवन की एक आकर्षक झलक देते हैं जो आगे आने वाला है।

“परमेश्वर (हमारी) आँखों से हर आँसू पोंछ डालेगा, और मृत्यु फिर न रहेगी; न शोक, न रोना, न पीड़ा फिर कभी होगी; क्योंकि पुरानी बातें और पहले की व्यवस्था समाप्त हो गई हैं” (प्रकाशितवाक्य अध्याय 21 आयत 4)।

“और फिर कोई शाप न रहेगा” (प्रकाशितवाक्य अध्याय 22 आयत 3)।

अनन्तकालीन दृष्टिकोण।

हमें यह भी समझना चाहिए कि पृथ्वी पर अपनी वर्तमान अवस्था में जीवन—जो पाप और मृत्यु के शाप के बोझ तले कराह रहा है—हमारे लिए परमेश्वर की योजना का केवल एक बहुत छोटा भाग है। हम अनन्त अस्तित्व वाले प्राणी हैं। हमारे अस्तित्व का बड़ा भाग इस जीवन के बाद है, पहले स्वर्ग में और फिर नई पृथ्वी पर। नई पृथ्वी वही पुरानी पृथ्वी होगी जो परिवर्तित होकर पाप और मृत्यु के शाप से मुक्त कर दी जाएगी (यशायाह अध्याय 65 आयत 17 और 2 पतरस अध्याय 3 आयत 13)।

आने वाला जीवन केवल परेशानियों और पीड़ा के हट जाने तक सीमित नहीं होगा। वह प्रतिपूर्ति भी प्रदान करेगा। सब कुछ ठीक कर दिया जाएगा। परमेश्वर केवल आँसू ही नहीं पोंछेगा, बल्कि उनकी जगह आनन्द भर देगा। इस जीवन के दुख उस महिमा की तुलना में कुछ भी नहीं हैं जो आगे हमारी प्रतीक्षा कर रही हैं। इस पतित पृथ्वी पर मानव इतिहास के छह से दस हजार वर्ष और मनुष्यों द्वारा सहा गया सारा दुख, अनन्तकाल और उस बात की तुलना में बहुत छोटा है जो हमारा इंतज़ार कर रही है।

“जो कुछ हमें अभी सहना पड़ सकता है, वह उस महान भविष्य की तुलना में कुछ भी नहीं है जिसे परमेश्वर ने हमारे लिए तैयार किया है। सारी सृष्टि उत्कंठा से उस अद्भुत दृश्य की प्रतीक्षा कर रही है जब परमेश्वर के पुत्र अपने वास्तविक गौरव में प्रकट होंगे” (रोमियों अध्याय 8 आयत 18 से 19)।

“क्योंकि सारी सृष्टि धैर्य और आशा के साथ उस भविष्य के दिन की प्रतीक्षा कर रही है जब परमेश्वर अपनी संतानों को पुनर्जीवित करेगा। क्योंकि उस दिन काँटे और ऊँटकटारे, पाप, मृत्यु और क्षय—वे सब बातें जिन्होंने परमेश्वर की आज्ञा से संसार को उसकी इच्छा के विरुद्ध अपने अधीन कर लिया था—सब समाप्त हो जाएँगी, और हमारे चारों ओर की सृष्टि भी उस महिमामय स्वतंत्रता में सहभागी होगी जिसका आनन्द परमेश्वर की संतानें लेती हैं” (रोमियों अध्याय 8 आयत 19 से 21)।

मैं किसी भी प्रकार से इस जीवन में लोगों द्वारा अनुभव की जाने वाली पीड़ा को कम करके नहीं आँक रही हूँ। परन्तु बड़ी तस्वीर के विषय में सही दृष्टिकोण हमारी कठिनाइयों के बोझ को हल्का कर सकता है। जब कोई बच्चा अपना प्रिय खिलौना खो देता है, या जब किसी किशोर को नृत्य समारोह के लिए साथी नहीं मिलता, तो वास्तव में उनका हृदय टूट जाता है। परन्तु वयस्कता के दृष्टिकोण से और पूरे जीवनकाल के संदर्भ में, हम समझते हैं कि ये बातें उस क्षण जितनी विनाशकारी प्रतीत होती हैं, उतनी वास्तव में नहीं होतीं।

मैं यह भी नहीं कह रही कि किसी प्रियजन को खोने की पीड़ा एक खिलौना खोने के बराबर है, या कि किसी निर्दोष लड़के या लड़की के साथ दुर्व्यवहार की तुलना किसी नृत्य समारोह के लिए साथी न मिलने से की जा सकती है। मैं केवल यह दिखा रही हूँ कि एक भिन्न दृष्टिकोण जीवन के आघातों के बोझ को कम कर सकता है। स्वर्ग में कोई भी इस बात का

शोक नहीं मना रहा कि उसने अपने जीवनकाल में अत्यंत कठिन परिस्थितियों में जीवन बिताया था, या कि उसने पृथ्वी को क्रूर या विनाशकारी परिस्थितियों में छोड़ा था।

जो लोग प्रभु को जानते हैं, उनके लिए इस वर्तमान जीवन की हानियाँ और दुख अस्थायी हैं। इस संसार के अन्यायों, हृदय-पीड़ाओं और त्रासदियों के उलटफेर का अंतिम मंच आने वाले जीवन में हमारी प्रतीक्षा कर रहा है। यह ज्ञान हमें उन अनेक चुनौतियों के बीच टिके रहने में सहायता कर सकता है जिनका हम सामना करते हैं।

परमेश्वर सार्वभौम है।

यद्यपि हम जीवन की कठिनाइयों से बच नहीं सकते, फिर भी इस तथ्य से प्रोत्साहित हो सकते हैं कि परमेश्वर सार्वभौम है। बहुत से लोग परमेश्वर की सार्वभौमिकता का अर्थ यह लेते हैं कि जो कुछ भी होता है, उसके पीछे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से परमेश्वर ही हैं। वे मानते हैं कि क्योंकि परमेश्वर सार्वभौम है, इसलिए वह लोगों के साथ भलाई भी कर सकता है और बुराई भी। परन्तु सार्वभौमिकता का यह दृष्टिकोण उस बात के विपरीत है जो यीशु हमें परमेश्वर के विषय में दिखाता है। परमेश्वर की सार्वभौमिकता की सही समझ यह स्वीकार करती है कि वह ब्रह्मांड में सर्वोच्च सामर्थ्य और अधिकार रखता है।

अपनी सामर्थ्य और अधिकार के कारण, परमेश्वर जो कुछ भी होता है उसे अपने उस उद्देश्य की पूर्ति में लगा सकता है कि उसका एक परिवार हो। वह उन आकस्मिक घटनाओं को भी, जिनकी उत्पत्ति उससे नहीं हुई—वे संयोगवश घटनाएँ जो पाप के कारण इस संसार की अव्यवस्था में घटित होती हैं—अपने उद्देश्यों की पूर्ति में लगा सकता है। जब परमेश्वर अपने परिवार को एकत्र करता है, तब वह वास्तविक बुराई में से भी महान भलाई उत्पन्न कर सकता है।

परमेश्वर द्वारा अपने परिवार को प्राप्त करने के संदर्भ में, बाइबल कहती है कि वह “सब कुछ अपनी इच्छा की योजना के अनुसार कार्यान्वित करता है” (इफिसियों अध्याय 1 आयत 11) और “जो लोग परमेश्वर से प्रेम रखते हैं और उसकी योजना के अनुसार बुलाए गए हैं, उनके लिए वह सब बातों को मिलाकर भलाई उत्पन्न करता है” (रोमियों अध्याय 8 आयत 28)। यह उन लोगों के लिए अत्यंत उत्साहवर्धक समाचार है जो पाप से शापित पृथ्वी पर जीवन जी रहे हैं, जहाँ क्लेश और परीक्षाएँ प्रतिदिन के जीवन का हिस्सा हैं। आगे के अध्यायों

मैं हम कुछ अद्भुत उदाहरणों पर विचार करेंगे कि किस प्रकार परमेश्वर अपनी सार्वभौमिकता में ऐसा करता है। (परमेश्वर की सार्वभौमिकता पर अधिक विस्तृत चर्चा के लिए- परमेश्वर अच्छा है... और अच्छा मतलब अच्छा है पढ़ें।)

पीड़ा का रहस्य।

मानवीय पीड़ा का विषय बहुत रहस्य से घिरा हुआ है। इस समय कोई भी पूरी तरह यह नहीं समझा सकता कि हर प्रकार की पीड़ा और व्यथा क्यों घटित होती है। परन्तु जो बातें हम अभी तक नहीं समझते, उन्हें हम उस बात को कमजोर नहीं करने दे सकते जो हम यीशु में और उसके द्वारा परमेश्वर की भलाई के विषय में स्पष्ट रूप से जानते हैं।

“गुप्त बातें तो हमारे परमेश्वर यहोवा की हैं; परन्तु जो बातें प्रकट की गई हैं, वे सदा के लिए हमारी और हमारी संतानों की हैं” (व्यवस्थाविवरण अध्याय 29 आयत 29)।

यदि हम व्यवस्थाविवरण के इस पूरे अंश को उद्धृत करें, तो हम देखेंगे कि इसका संदर्भ पाप के कारण होने वाली पीड़ा है। परमेश्वर ने अपने भविष्यद्वक्ता मूसा के द्वारा इस्राएल को चेतावनी दी थी कि यदि वे उसे छोड़कर झूठे देवताओं की उपासना करेंगे—जो उन्होंने की—तो वे अपने शत्रुओं के हाथों बड़ी कठिनाइयों का अनुभव करेंगे। यद्यपि परमेश्वर ने उन्हें पहले ही बता दिया था कि क्या होगा और क्यों होगा, फिर भी वह जानता था कि जब यह सब घटित होगा, तब कुछ लोगों के मन में प्रश्न उठेंगे। इसलिए परमेश्वर ने उन्हें पहले से ही यह चेतावनी दी: जो बातें तुम नहीं समझते, उन्हें अपने उस ज्ञान को कमजोर न करने दो जो तुम जानते हो। हमें भी परमेश्वर की इस शिक्षा पर ध्यान देना चाहिए।

क्यों या क्या?

एक बार जब मैं बाइबल पढ़ रही थी, तो मैंने हर उस स्थान को नोट किया जहाँ किसी ने “क्यों” पूछा था। मैंने पाया कि बहुत कम लोगों को वह उत्तर मिला जो वे चाहते थे, क्योंकि

बाइबल हमेशा “क्यों” का उत्तर नहीं देती। बल्कि, वह हमें यह निर्देश देती है कि “क्या” करना है।

“क्यों” एक उचित प्रश्न हो सकता है, परन्तु जीवन की चुनौतियों के बीच यह हमेशा सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न नहीं होता जिसका उत्तर तुम्हें चाहिए। यह जान लेना कि कोई बात क्यों हुई, अपने आप समस्या का समाधान नहीं करता। उदाहरण के लिए, यदि तुम्हें यह पता भी हो कि तुम्हारी गाड़ी क्यों स्टार्ट नहीं हो रही, तब भी तुम कहीं नहीं जा सकोगे जब तक तुम्हें यह न पता हो कि उसके बारे में क्या करना है। ध्यान दीजिए कि जब उसके चेलों ने उससे पूछा कि एक विशेष व्यक्ति जन्म से अंधा क्यों था, तब यीशु ने कैसे उत्तर दिया।

“और जाते हुए यीशु ने एक मनुष्य को देखा जो जन्म से अंधा था। उसके चेलों ने उससे पूछा, ‘हे गुरु, किसने पाप किया था, इस मनुष्य ने या उसके माता-पिता ने, कि यह जन्म से अंधा पैदा हुआ?’ यीशु ने उत्तर दिया, ‘न तो इस मनुष्य ने पाप किया, न उसके माता-पिता ने; परन्तु इसलिए कि परमेश्वर के कार्य उसमें प्रकट हों। मुझे उसके कार्य करना अवश्य है जिसने मुझे भेजा है, जब तक दिन है; रात आने वाली है, जब कोई काम नहीं कर सकता’” (यूहन्ना अध्याय 9 आयत 1 से 4)।

“यह कहकर उसने भूमि पर थूका, लार से मिट्टी बनाई, और उस मनुष्य की आँखों पर लगाई। फिर उससे कहा, ‘जा, शीलोह के कुंड में धो ले।’ तब वह गया, धोया, और देखने वाला होकर घर लौटा” (यूहन्ना अध्याय 9 आयत 6 से 8)।

उस दिन यीशु ने अपने चेलों द्वारा पूछे गए “क्यों” के प्रश्न का सीधा उत्तर नहीं दिया, केवल इतना बताया कि उस व्यक्ति का अंधापन न तो उसके माता-पिता के पाप का परिणाम था और न ही उसके अपने पाप का। इसके बजाय, यीशु ने अपने चेलों को बताया कि वह क्या करने जा रहा है—परमेश्वर के कार्यों को करते हुए उस अंधे व्यक्ति को चंगा करना।

आगे बढ़ने से पहले, हमें पवित्रशास्त्र के इस भाग की एक सामान्य गलत व्याख्या पर संक्षेप में विचार करना चाहिए। कुछ लोग कहते हैं कि यीशु के उत्तर का अर्थ यह था कि यह व्यक्ति परमेश्वर की इच्छा के अनुसार अंधा पैदा हुआ था। उनका दावा है कि परमेश्वर ने इस अंधेपन की अनुमति इसलिए दी ताकि वह उस व्यक्ति को चंगा करके अपनी सामर्थ्य प्रदर्शित कर सके। यह व्याख्या सही नहीं है। कुछ बातों पर ध्यान दीजिए:

• यदि अंधापन परमेश्वर का कार्य था, तो जब यीशु ने उस व्यक्ति को चंगा किया, तब उसने परमेश्वर का कार्य करते हुए परमेश्वर के कार्य को नष्ट कर दिया। चंगाई और अंधापन दोनों एक साथ परमेश्वर का कार्य नहीं हो सकते। यदि किसी भी समय, किसी भी कारण से उस व्यक्ति का अंधापन परमेश्वर की इच्छा के अनुसार था, तो उसे चंगा करके यीशु ने परमेश्वर की इच्छा को उलट दिया।

• परमेश्वर स्वयं के विरुद्ध कार्य नहीं करता कि पहले मनुष्यों को पीड़ा दे और फिर मुड़कर उन्हें मुक्त करे। एक अवसर पर फरीसियों ने यीशु पर आरोप लगाया कि वह शैतान की शक्ति से दुष्टात्माओं को निकालता है। यीशु ने उन्हें उत्तर दिया, “यदि शैतान शैतान को निकाले, तो वह अपने ही विरुद्ध विभाजित हो गया; तब उसका राज्य कैसे स्थिर रहेगा?” (मत्ती अध्याय 12 आयत 26)। यदि शैतान अपने ही हितों के विरुद्ध कार्य नहीं करता, तो निश्चय ही परमेश्वर भी ऐसा नहीं करता। परमेश्वर का राज्य विभाजित नहीं है।

• इस पतित संसार में पहले से ही पर्याप्त बीमार लोग हैं। परमेश्वर को चंगा करने का अवसर प्रदान करने के लिए लोगों को पीड़ित करने, या उन्हें पीड़ित होने देने की आवश्यकता नहीं है।

जब हम मूल यूनानी भाषा के कुछ पहलुओं को समझते हैं, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि उस व्यक्ति के अंधापन के पीछे किसी भी प्रकार से परमेश्वर नहीं था, और यीशु का ध्यान “क्यों” के बजाय “क्या करना है” पर था।

“उसके चेलों ने उससे पूछा, ‘हे गुरु, किसने पाप किया था, इस मनुष्य ने या उसके माता-पिता ने, कि यह जन्म से अंधा पैदा हुआ?’ यीशु ने उत्तर दिया, ‘न तो इस मनुष्य ने पाप किया, न उसके माता-पिता ने; परन्तु परमेश्वर के कार्य उसमें प्रकट हों। मुझे उसके कार्य करना अवश्य है जिसने मुझे भेजा है, जब तक दिन है’” (यूहन्ना अध्याय 9 आयत 2 से 4)।

चेलों के प्रश्न और यीशु के उत्तर दोनों में “किया” शब्द पर ध्यान दीजिए। मूल भाषा में इस शब्द का उपयोग कभी उद्देश्य (क्यों) व्यक्त करने के लिए और कभी परिणाम (क्या) व्यक्त करने के लिए किया जाता है। इस अंश में यह परिणाम को प्रकट करता है।

चेलों ने पूछा: किसके पाप के परिणामस्वरूप यह व्यक्ति अंधा हुआ? यीशु ने उत्तर दिया: न तो इस मनुष्य के पाप ने और न ही उसके माता-पिता के पाप ने इस अंधेपन को उत्पन्न किया, परन्तु इसका परिणाम यह होगा कि यह व्यक्ति चंगा किया जाएगा। फिर उसने उनका ध्यान इस ओर मोड़ा कि “हमें क्या करना चाहिए।” यीशु ने कहा: मुझे परमेश्वर के कार्य करने हैं और इस व्यक्ति को चंगा करना है।



यद्यपि हम हमेशा यह नहीं जानते कि विशेष कठिनाइयाँ क्यों आती हैं (इस सामान्य सत्य से परे कि यह पाप से शापित संसार में जीवन का हिस्सा है), फिर भी हम परमेश्वर की भलाई और उसके उद्देश्य को जानते हैं। इसलिए, हम निश्चित हो सकते हैं कि वह हमारी कठिनाइयों में से भलाई उत्पन्न करेगा और उन्हें अपने उस अनन्त उद्देश्य की पूर्ति में लगाएगा कि उसका एक परिवार हो। हम इस बात का आश्वासन रख सकते हैं कि उस घटना से जुड़ी कोई भी हानि अस्थायी है। और हम विश्वासपूर्वक जान सकते हैं कि उस परिस्थिति की हृदय-पीड़ा और अन्याय एक दिन पलट दिए जाएँगे। आगे हम कुछ उदाहरणों पर विचार करेंगे कि परमेश्वर यह कैसे करता है।



परमेश्वर का प्रेम और हमारी परिस्थितियाँ

एक बाइबल शिक्षक के रूप में, लोगों ने मुझसे पूछा है: “यह त्रासदी मेरे साथ क्यों हुई?” कभी-कभी मेरे उत्तर देने से पहले ही वे अपने प्रश्न का उत्तर स्वयं इस प्रकार दे देते हैं: “शायद परमेश्वर मुझसे प्रेम नहीं करता।”

बहुत से लोगों की यह धारणा है कि जीवन की अच्छी और बुरी घटनाएँ परमेश्वर के अधिक या कम प्रेम की अभिव्यक्तियाँ हैं। यदि सब कुछ ठीक चल रहा हो, तो वे आश्वस्त होते हैं कि परमेश्वर उनसे प्रेम करता है। यदि बातें गलत होने लगें, तो वे मान लेते हैं कि परमेश्वर उनसे कम प्रेम करता है या बिल्कुल प्रेम नहीं करता। परन्तु जीवन के उतार-चढ़ाव परमेश्वर के प्रेम के संकेतक नहीं हैं। इस अध्याय में, जब हम “क्यों” के प्रश्न का उत्तर खोजेंगे, तब हम परमेश्वर के प्रेम और हमारी कठिनाइयों के बीच संबंध का अध्ययन करेंगे।

बिना शर्त प्रेम।

मनुष्य के प्रति परमेश्वर का प्रेम बिना शर्त है, जिसका अर्थ है कि उसके प्रेम को पाने के लिए हमें कोई शर्त पूरी नहीं करनी होती, और ऐसा कुछ भी नहीं है जो हम कर सकें जिससे

उसका प्रेम हमसे छिन जाए। इसे समझने का शायद सबसे अच्छा तरीका एक सुगंधित फूल के बारे में सोचना है। वह हर किसी के लिए अपनी सुगंध फैलाता है। चाहे कोई अच्छा व्यक्ति उस फूल के पास आए या कोई बुरा व्यक्ति, दोनों एक ही सुगंध का अनुभव करते हैं। फूल एक व्यक्ति से अपनी सुगंध रोककर दूसरे को नहीं दे सकता, क्योंकि सुगंधित होना उसका स्वभाव है। परमेश्वर के प्रेम के साथ भी ऐसा ही है।

परमेश्वर का प्रेम हमारे भीतर किसी बात की प्रतिक्रिया नहीं है। वह तुमसे इसलिए प्रेम नहीं करता क्योंकि तुम अच्छे हो। वह तुमसे अपना प्रेम इसलिए नहीं रोकता क्योंकि तुम बुरे हो। परमेश्वर तुमसे प्रेम करता है क्योंकि वह प्रेम है। तुम्हारे लिए उसका प्रेम उसके स्वभाव का प्रकटीकरण है। तुम्हें परमेश्वर का प्रेम इसलिए नहीं मिला क्योंकि तुमने कुछ सही किया, बल्कि इसलिए क्योंकि वह प्रेम है (1 यूहन्ना अध्याय 4 आयत 8)। प्रेम करना उसका स्वभाव है। वह इसके अतिरिक्त कुछ और कर ही नहीं सकता।

प्रभु तुम्हारे भीतर कमियाँ होने के कारण अपना प्रेम नहीं रोकता। वह तुम्हारी कमियों सहित तुमसे प्रेम करता है। यह कहने का मेरा अर्थ यह नहीं है कि हम क्या करते हैं, उससे कोई फर्क नहीं पड़ता। हमें पवित्र जीवन जीने के लिए बुलाया गया है। परन्तु धर्मी जीवन जीने का उद्देश्य परमेश्वर का प्रेम और आशीष कमाना नहीं है। उसे कमाया नहीं जा सकता। पवित्र जीवन परमेश्वर की महिमा करता है। हमें इसलिए रचा गया है कि हम परमेश्वर के पुत्र और पुत्रियाँ बनें और अपने आसपास की दुनिया के सामने उसकी पवित्रता को सही रूप में प्रतिबिंबित करके उसकी महिमा करें।

“ताकि हम, जिन्होंने पहले मसीह में आशा रखी—जिन्होंने सबसे पहले उसमें अपना विश्वास रखा—उसकी महिमा की स्तुति के लिए जीवन जिएँ” (इफिसियों अध्याय 1 आयत 12)।

“परमेश्वर की आज्ञा मानो क्योंकि तुम उसकी संतान हो। अपनी पुरानी बुरी चालों में फिर से मत लौटो; तब तुम बेहतर नहीं जानते थे। परन्तु अब तुम्हें अपने हर कार्य में पवित्र होना चाहिए, जैसे परमेश्वर—जिसने तुम्हें अपनी संतान बनने के लिए चुना—पवित्र है। क्योंकि उसने स्वयं कहा है, ‘तुम पवित्र बनो क्योंकि मैं पवित्र हूँ’” (1 पतरस अध्याय 1 आयत 14 से 16)।

क्रूस और परमेश्वर का प्रेम।

यीशु मसीह का क्रूस मनुष्य के प्रति परमेश्वर के बिना शर्त प्रेम का सर्वोच्च प्रदर्शन है। यह हमारी भलाई या हमारी योग्यता से नहीं, बल्कि परमेश्वर के प्रेम से प्रेरित था। क्रूस के द्वारा, परमेश्वर ने हमारे प्रति अपने प्रेम को उस समय प्रकट किया जब हम अपनी सबसे बुरी अवस्था में थे। यीशु तुम्हारे और मेरे लिए तब मरा जब हम पापी थे और परमेश्वर के शत्रु थे, उसके विरुद्ध पूर्ण विद्रोह में थे।

“परन्तु परमेश्वर हमारे प्रति अपने प्रेम को इस रीति से प्रकट करता है कि जब हम अब भी पापी ही थे, तब मसीह हमारे लिए मरा... जब हम परमेश्वर के शत्रु थे, तब उसके पुत्र की मृत्यु के द्वारा हमारा उससे मेल हुआ” (रोमियों अध्याय 5 आयत 8 से 10)।

“परमेश्वर ने अपना प्रेम हमारे बीच इस प्रकार प्रकट किया: उसने अपने एकलौते पुत्र को संसार में भेजा ताकि हम उसके द्वारा जीवन पाएँ। प्रेम यह नहीं कि हमने परमेश्वर से प्रेम किया, बल्कि यह कि उसने हमसे प्रेम किया और अपने पुत्र को हमारे पापों के प्रायश्चित्त बलिदान के रूप में भेजा” (1 यूहन्ना अध्याय 4 आयत 9 से 10)।

“क्योंकि परमेश्वर ने जगत से ऐसा प्रेम रखा कि उसने अपना एकलौता पुत्र दे दिया, ताकि जो कोई उस पर विश्वास करे वह नाश न हो, परन्तु अनन्त जीवन पाए” (यूहन्ना अध्याय 3 आयत 16)।

परमेश्वर के प्रेम ने उसे तुम्हारी सबसे बड़ी आवश्यकता—तुम्हारे पापों से उद्धार—को पूरा करने के लिए प्रेरित किया। यदि परमेश्वर ने तुम्हें तुम्हारे सबसे बुरे दिन में प्रेम किया, अर्थात् उस किसी भी दिन जब तुमने प्रभु यीशु मसीह के सामने अपना घुटना नहीं टेका था, तो अब जब तुम उसके पुत्र या पुत्री हो, वह तुमसे कम प्रेम क्यों करेगा? उसका प्रेम तुम्हारे लिए अचानक शर्तों पर आधारित क्यों हो जाएगा? अब उसके प्रेम को अपने कर्मों के द्वारा कमाना क्यों आवश्यक हो जाएगा?

मसीह का क्रूस वह वस्तुनिष्ठ मापदंड है जिसके द्वारा हम जानते हैं कि परमेश्वर हमसे प्रेम करता है। जब हमें यह अनुभव नहीं होता कि परमेश्वर हमसे प्रेम करता है, तब क्रूस हमारी भावनाओं पर विजय प्राप्त करता है। जब हमारा मन यह प्रश्न करता है कि परमेश्वर ऐसे

व्यक्ति से कैसे प्रेम कर सकता है जो हमारी तरह बार-बार असफल होता है, तब क्रूस उन विचारों का उत्तर देता है। जब जीवन की कठिनाइयाँ मानो यह पुकारती हैं कि परमेश्वर हमारी परवाह नहीं करता, तब क्रूस हमारी परिस्थितियों पर विजय प्राप्त करता है। क्रूस हमें दिखाता है कि परमेश्वर हमारे प्रति कितना आदर और मूल्य रखता है। इस ज्ञान के साथ, हम उन सभी प्रतीत होने वाली चुनौतियों को शांत कर सकते हैं जो परमेश्वर के प्रेम की निश्चितता पर प्रश्न उठाती हैं।

मूल्य और महत्व।

हममें से बहुतों के लिए यह विश्वास करना कठिन होता है कि परमेश्वर हमसे प्रेम करता है, क्योंकि हम मूल्य और महत्व को उपलब्धियों, सफलताओं और प्रतिभाओं से जोड़ते हैं। इसलिए, जब हम कम पड़ जाते हैं या अपेक्षा के अनुसार खरे नहीं उतरते, तो हमें निश्चित लगता है कि परमेश्वर का प्रेम हमारे लिए कम हो गया है।

परन्तु वास्तविक मूल्य और महत्व इस बात से निर्धारित होते हैं कि कोई व्यक्ति किसी वस्तु के लिए कितना मूल्य चुकाने को तैयार है। इस उदाहरण पर विचार कीजिए: एक महिला अपने घर के बाहर पुरानी वस्तुओं की बिक्री लगा रही है, और जिन वस्तुओं को उसने बाहर रखा है उनमें एक दीपक भी है। उसे वह कभी पसंद नहीं था। वह उसे किसी ऐसे व्यक्ति ने दिया था जिसे वह पसंद नहीं करती। उसकी दृष्टि में वह दीपक एक बेकार वस्तु है जिसे वह कूड़े में फेंकना ही बेहतर समझेगी। परन्तु तभी दूसरी महिला वहाँ आती है और उस दीपक को देखती है। उसकी दृष्टि में वह दीपक सबसे सुंदर वस्तु है जो उसने कभी देखी है। वह अपने पर्स में जल्दी-जल्दी खोजने लगती है, यह आशा करते हुए कि उसके पास इस खजाने को खरीदने के लिए पर्याप्त पैसे हों।

उस दीपक के मूल्य के विषय में दोनों महिलाओं के विचारों में अंतर किस बात ने उत्पन्न किया? वह स्वयं दीपक में कोई बात नहीं थी, बल्कि उन दोनों के भीतर कुछ था—उस वस्तु के प्रति उनका मूल्यांकन। इसी प्रकार, परमेश्वर ने हमें अपने पुत्र की मृत्यु के योग्य मूल्यवान समझा। वह यीशु मसीह के लहू की कीमत चुकाने के लिए तैयार था क्योंकि वह हमसे प्रेम करता है और चाहता है कि हम उसके परिवार के सदस्य बनें।

“क्या तुम नहीं जानते कि तुम्हारा शरीर पवित्र आत्मा का मंदिर है, जो तुम में वास करता है और जो तुम्हें परमेश्वर की ओर से दिया गया है? तुम अपने नहीं हो, क्योंकि परमेश्वर ने तुम्हें बड़ी कीमत देकर मोल लिया है। इसलिए अपने शरीर के द्वारा परमेश्वर का आदर करो” (1 कुरिन्थियों अध्याय 6 आयत 19 से 20)।

“क्योंकि तुम जानते हो कि परमेश्वर ने तुम्हें छुड़ाने के लिए कीमत चुकाई... और जो कीमत उसने चुकाई, वह केवल सोना या चाँदी नहीं थी। उसने तुम्हारे लिए मसीह के बहुमूल्य जीवन-रक्त की कीमत चुकाई, जो निष्पाप और निष्कलंक परमेश्वर का मेम्ना है” (1 पतरस अध्याय 1 आयत 18 से 19)।

हम “क्यों” के प्रश्न से आंशिक रूप से इसलिए संघर्ष करते हैं क्योंकि हम आशा करते हैं कि यह समझ लेना कि कोई बात क्यों हुई, उस घटना को अर्थ देगा और हमें आश्वस्त करेगा कि हमारे जीवन का मूल्य है। हमेशा स्मरण रखो कि तुम्हारा मूल्य और महत्व इस तथ्य से आता है कि परमेश्वर तुमसे प्रेम करता है, उसने तुम्हें मोल लिया है, और उसके पुत्र या पुत्री के रूप में तुम उसकी अनन्त योजना का भाग हो।

पौलुस और परमेश्वर का प्रेम।

यदि परेशान करने वाली और पीड़ादायक परिस्थितियाँ यह सिद्ध करती हैं कि प्रभु का प्रेम हमारे लिए कम हो गया है, तो फिर परमेश्वर प्रेरित पौलुस को सहन ही नहीं कर सकता था। जब हम पौलुस के जीवन को देखते हैं, तो पाते हैं कि मसीही बनने के समय से लेकर अपने विश्वास के कारण शहीद होने तक उसने अत्यंत कठिनाइयों का सामना किया। उसने क्लेश, सताव, भूख, निरंतर मृत्यु के खतरे, शैतान की ओर से उत्पीड़न, और उन कलीसियाओं की चिंताओं का सामना किया जिनकी वह देखरेख करता था (2 कुरिन्थियों अध्याय 11 आयत 23 से 29)।

फिर भी, जब हम पौलुस की लिखी बातों को पढ़ते हैं, तो कहीं भी इस प्रकार का संकेत नहीं मिलता: “परमेश्वर मेरे साथ ऐसा क्यों कर रहा है?” “मैंने क्या गलत किया है?” “शायद परमेश्वर मुझसे प्रेम नहीं करता।” पौलुस समझता था कि जिन कठिनाइयों को उसने सहा, वे उसके प्रति परमेश्वर के प्रेम की मात्रा की अभिव्यक्ति नहीं थीं। वह जानता था कि परमेश्वर

उसकी परवाह करता है क्योंकि वह पहचानता था कि मसीह का क्रूस परमेश्वर के प्रेम का सर्वोच्च प्रदर्शन है। यह स्वयं पौलुस की गवाही थी।

“मैं विश्वास से जीवन जी रहा हूँ, परमेश्वर के पुत्र के उस विश्वास से, जिसने मुझसे प्रेम किया और अपने आप को मेरे लिए दे दिया” (गलातियों अध्याय 2 आयत 20)।

“कौन हमें मसीह के प्रेम से अलग कर सकता है? क्या क्लेश, पीड़ा या सताव? क्या वस्त्र और भोजन की कमी, जीवन और शरीर के लिए खतरा, या हथियारों की धमकी? ...नहीं, इन सब बातों में हम उसके द्वारा जो हमसे प्रेम सिद्ध कर चुका है, प्रचंड विजय प्राप्त करते हैं” (रोमियों अध्याय 8 आयत 35 से 37)।

अब तक इस पुस्तक में उद्धृत किए गए बहुत-से पद पवित्रशास्त्र के उन भागों से हैं जिन्हें पौलुस ने लिखा। वे न केवल हमें “क्यों” के प्रश्न का सही उत्तर देने में सहायता करते हैं, बल्कि यह भी समझ देते हैं कि पौलुस ने अपने जीवन की अनेक विपत्तियों को किस दृष्टि से देखा।

- पौलुस जानता था कि परमेश्वर का उसके प्रति प्रेम उसके व्यवहार की प्रतिक्रिया नहीं था। वह समझता था कि परमेश्वर उससे तब भी प्रेम करता था जब वह पापी था—परमेश्वर का शत्रु, जो मसीहियों को सताता था (रोमियों अध्याय 5 आयत 8 से 10 और 1 तीमुथियुस अध्याय 1 आयत 15 से 16)।

- पौलुस जानता था कि उसकी परीक्षाएँ परमेश्वर की ओर से नहीं आई थीं। वह समझता था कि जीवन कठिन है क्योंकि आदम के पाप ने पृथ्वी में मृत्यु का शाप प्रवेश कराया (रोमियों अध्याय 5 आयत 12; अध्याय 8 आयत 19 से 21)।

- पौलुस जानता था कि मनुष्य पापी स्वभाव के साथ जन्म लेते हैं, और शैतान उनके भीतर और उनके माध्यम से कार्य करके जीवन की बहुत-सी अव्यवस्थाएँ उत्पन्न करता है (रोमियों अध्याय 5 आयत 19; इफिसियों अध्याय 2 आयत 1 से 3)। वह जानता था कि शैतान लोगों को परेशान करता है और परमेश्वर के विषय में झूठ प्रस्तुत करता है ताकि उसमें हमारे

विश्वास को कमजोर कर सके (2 कुरिन्थियों अध्याय 11 आयत 3; अध्याय 12 आयत 7; इफिसियों अध्याय 6 आयत 11 से 12)।

पौलुस समझता था कि ये सभी बातें जीवन के संघर्षों को उत्पन्न करती हैं। परन्तु वह यह भी जानता था कि परमेश्वर इन विपत्तियों का उपयोग कर सकता है और अपने परिवार को एकत्र करते हुए उन्हें भलाई के लिए अपनी योजना की पूर्ति में लगा सकता है। यही पौलुस है जिसने लिखा:

“और हम जानते हैं कि जो लोग परमेश्वर से प्रेम रखते हैं और उसकी योजना के अनुसार बुलाए गए हैं, उनके लिए परमेश्वर सब बातों को मिलाकर भलाई उत्पन्न करता है। क्योंकि परमेश्वर ने अपने लोगों को पहले से जान लिया, और उन्हें अपने पुत्र के समान बनने के लिए चुन लिया, ताकि उसका पुत्र बहुत से भाइयों और बहनों में पहिलौठा ठहरे। और जिन्हें उसने चुना, उन्हें उसने अपने पास बुलाया। और उन्हें अपने साथ धर्मी ठहराया, और उन्हें अपनी महिमा का वचन दिया” (रोमियों अध्याय 8 आयत 28 से 30)।

पौलुस यह भी जानता था कि मनुष्य के लिए परमेश्वर की योजना और उस योजना को पूरा करने के लिए उसने जितनी बड़ी कीमत चुकाई, उसके प्रकाश में प्रभु उसके पक्ष में है। यदि परमेश्वर उसके पक्ष में है, तो कुछ भी स्थायी रूप से उसके विरुद्ध नहीं हो सकता।

“ऐसी अद्भुत बातों के विषय में हम क्या कहें? यदि परमेश्वर हमारे पक्ष में है, तो कौन हमारे विरुद्ध हो सकता है? जिसने अपने निज पुत्र को भी न छोड़ा, बल्कि हम सब के लिए उसे दे दिया, तो क्या वह जिसने हमें मसीह दिया, उसके साथ हमें और सब कुछ भी न देगा?” (रोमियों अध्याय 8 आयत 31 से 32)।

पौलुस बड़ी तस्वीर को समझता था। वह जानता था कि परमेश्वर ने अपने प्रेम में उसकी सबसे बड़ी आवश्यकता—उसके पापों से उद्धार—को पूरा कर दिया है, और वह बाकी सब बातों की भी देखभाल करेगा। इस ज्ञान ने पौलुस के अत्यंत कठिन जीवन के बोझ को हल्का कर दिया। उसने लिखा:

“क्योंकि हमारी वर्तमान परेशानियाँ बहुत छोटी हैं और अधिक समय तक रहने वाली नहीं हैं। फिर भी वे हमारे लिए ऐसी असीम महान महिमा उत्पन्न करती हैं जो सदा बनी रहेगी! इसलिए हम उन परेशानियों पर ध्यान नहीं लगाते जिन्हें हम अभी देख सकते हैं; बल्कि हम उस बात की ओर देखते हैं जिसे हमने अभी तक नहीं देखा है। क्योंकि जो परेशानियाँ हम देखते हैं, वे शीघ्र समाप्त हो जाएँगी, परन्तु आने वाले आनन्द सदा बने रहेंगे” (2 कुरिन्थियों अध्याय 4 आयत 17 से 18)।

इस महान प्रेरित ने समझ लिया था कि इस समय परमेश्वर का मुख्य लक्ष्य जीवन की परेशानियों को समाप्त करना नहीं है। बल्कि, परमेश्वर का उद्देश्य सभी मनुष्यों को उनके पापों से उद्धार तक लाना और मसीह में विश्वास के द्वारा उन्हें अपना पुत्र बनाना है। इस संदर्भ में कि परमेश्वर किस प्रकार मनुष्यों के पापपूर्ण चुनावों को अपने अंतिम उद्देश्य की सेवा में लगाता है, पौलुस ने घोषणा की:

“ओह, हमारा परमेश्वर कितना अद्भुत है! उसकी धन-संपत्ति, बुद्धि और ज्ञान कितने महान हैं! हमारे लिए उसके निर्णयों और उसके कार्य करने के तरीकों को पूरी तरह समझना कितना असंभव है!” (रोमियों अध्याय 11 आयत 33)।

अनन्तकाल में, जब हम पूरी तस्वीर देखेंगे और हमारे पास सभी तथ्य होंगे, तब हम भी परमेश्वर की बुद्धि और उद्देश्य पर विस्मित रह जाएँगे। हम देखेंगे कि उसने पाप से शापित पृथ्वी पर जीवन की वास्तविकताओं का किस प्रकार उपयोग किया और अपने परिवार को प्राप्त करने की अपनी योजना को पूरा किया।



परमेश्वर हमसे इसलिए प्रेम नहीं करता क्योंकि हम अच्छे हैं, बल्कि इसलिए क्योंकि वह प्रेम है। परमेश्वर का हमारे प्रति वही प्रेम है जो उसका यीशु, उसके सिद्ध पुत्र, के प्रति है। जिस

रात यीशु क्रूस पर जाने वाला था, उसने अपने पिता—जो हमारे भी पिता हैं—से प्रार्थना की, “ताकि संसार जान ले कि तूने मुझे भेजा है और यह समझे कि तू उनसे उतना ही प्रेम करता है जितना तू मुझसे करता है” (यूहन्ना अध्याय 17 आयत 23)।

क्या तुम यह जानना चाहते हो कि परमेश्वर तुमसे प्रेम करता है या नहीं? अपनी परिस्थितियों की ओर मत देखो। क्रूस की ओर देखो, जहाँ सर्वशक्तिमान परमेश्वर ने तुम्हारे लिए अपने महान और अटल प्रेम को प्रकट किया। तब, इस जागरूकता के साथ कि परमेश्वर तुम्हारे पक्ष में है, तुम इस पतित संसार की कठिनाइयों का सामना कर सकते हो। तुम इस बात का आश्वासन रख सकते हो कि परमेश्वर तुम्हारी परेशानियों को अपने अनन्त उद्देश्यों की पूर्ति में लगाएगा और उन सब में से महान भलाई उत्पन्न करेगा।



परमेश्वर अपने पुत्रों और पुत्रियों से प्रेम करता है

मसीह के क्रूस के द्वारा परमेश्वर ने हमारे प्रति अपने बिना शर्त प्रेम को स्पष्ट रूप से प्रकट किया। परन्तु यीशु ने अपने क्रूस पर चढ़ाए जाने से पहले जो बहुत-सी बातें कहीं और कीं, वे भी मानवजाति के प्रति परमेश्वर के आदर और प्रेम के विषय में समझ प्रदान करती हैं। उसके कार्य और वचन हमें यह समझने में सहायता करते हैं कि परमेश्वर के प्रेम और चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों के बीच क्या संबंध है। आइए कुछ उदाहरणों पर दृष्टि डालें।

पापियों के साथ भोजन।

जब यीशु पृथ्वी पर था, तो वह अक्सर चुंगी लेने वालों (यहूदी कर वसूलने वालों) और पापियों के साथ भोजन करता था। उस समय उनकी संस्कृति में किसी के साथ भोजन करना केवल साथ बैठकर खाना खाने से कहीं अधिक अर्थ रखता था। यह उस व्यक्ति के साथ संबंध में प्रवेश करने का प्रतीक था। पापियों और चुंगी लेने वालों के साथ भोजन करके यीशु ने यह प्रदर्शित किया कि ये लोग उसके लिए और उसके स्वर्गीय पिता के लिए महत्व रखते थे। उस समय के धार्मिक अगुवों को यीशु का यह व्यवहार चौंकाने वाला लगता था और वे नियमित रूप से पापियों के साथ उसके भोजन करने के लिए उसकी आलोचना करते थे।

“परन्तु फरीसी और व्यवस्था के शिक्षक कुड़कुड़ाते हुए कहने लगे, ‘यह मनुष्य पापियों का स्वागत करता है और उनके साथ भोजन करता है’” (लूका अध्याय 15 आयत 2)।

अभी जो उद्धरण दिया गया, उसी अवसर पर यीशु ने फरीसियों की आलोचना का उत्तर कई दृष्टान्त सुनाकर दिया (लूका अध्याय 15 आयत 4 से 10)। पहले दृष्टान्त में, एक व्यक्ति की एक भेड़ खो गई, और दूसरे में, एक स्त्री का एक सिक्का खो गया। दोनों कहानियों में, मालिकों ने अपनी खोई हुई वस्तुओं को मिलने तक परिश्रमपूर्वक खोजा, और जब वे उन्हें वापस पा गए, तो अत्यंत आनन्दित हुए। जब यीशु यह कह रहा था, उसने अपने उन भोजन साथियों—जिन्हें लोग संदेह की दृष्टि से देखते थे—उन की तुलना उन खोई हुई वस्तुओं से की। उसने स्पष्ट कर दिया कि खोई हुई वस्तुएँ—अर्थात् वे लोग जिनके साथ वह भोजन कर रहा था—खो जाने पर अपना मूल्य नहीं खो देतीं। तुम उन्हें इसलिए नहीं छोड़ देते कि वे खो गए हैं। तुम उन्हें तब तक खोजते हो जब तक उन्हें पा न लो। और फिर आनन्द मनाते हो।

“मैं तुमसे कहता हूँ कि स्वर्ग में भी ऐसा ही आनन्द होता है—एक ऐसे पापी के लिए जिसका हृदय बदल जाता है, उन निन्यानवे धर्मियों से अधिक जिन्हें मन फिराव की आवश्यकता नहीं” (लूका अध्याय 15 आयत 7)।

इस घटना के कुछ समय बाद, आलोचकों ने फिर से यीशु को एक चुंगी लेने वाले के घर भोजन करने के लिए दोषी ठहराया। इस बार यीशु ने स्पष्ट रूप से घोषित किया कि वह “जो खो गया है उसे ढूँढ़ने और उसका उद्धार करने” आया है (लूका अध्याय 19 आयत 10)।

ध्यान दीजिए कि फरीसियों की आलोचनाओं के उत्तर में दोनों बार यीशु ने पापियों को “खोया हुआ” कहा। क्यों? क्योंकि अपनी विद्रोही अवस्था में मनुष्य उस उद्देश्य से खो गए हैं जिसके लिए उनकी रचना की गई थी: परमेश्वर के पुत्रत्व और उसके साथ संबंध के लिए। जब परमेश्वर ने आदम को बनाया, तब उसने एक पुत्र और उसमें पुत्रों की एक पूरी वंशावली बनाई (लूका अध्याय 3 आयत 38; उत्पत्ति अध्याय 5 आयत 1 से 2)। जब आदम ने परमेश्वर की आज्ञा का उल्लंघन किया, तब उसने परमेश्वर से स्वतंत्रता का चुनाव किया। ऐसा करके, आदम ने स्वयं को और सम्पूर्ण मानवजाति को, जो उसमें निहित थी, पाप और मृत्यु में ले गया। प्रभु ने अपना परिवार खो दिया।

यीशु पृथ्वी पर खोई हुई मानवजाति को ढूँढ़ने और उसका उद्धार करने के लिए आया। वह क्रूस पर इसलिए गया कि पाप का मूल्य चुका दे और मार्ग खोल दे ताकि परमेश्वर वह कर

सके जो उसका सदा से उद्देश्य था—पापी पुरुषों और स्त्रियों को पवित्र पुत्रों और पुत्रियों में परिवर्तित करना और उनके साथ प्रेमपूर्ण संबंध में रहना। जब कोई खोया हुआ पापी मन फिराता है, तो स्वर्ग आनन्दित होता है क्योंकि मसीह में विश्वास के द्वारा वह अपने सृजित उद्देश्य में पुनः स्थापित हो जाता है।

जब खोए हुए पुत्र घर लौटते हैं।

जिस दिन यीशु ने खोई हुई भेड़ और सिक्के के दृष्टान्त सुनाए, उसी दिन उसने एक तीसरी कहानी भी सुनाई, एक खोए हुए पुत्र के विषय में। पहले और दूसरे दृष्टान्त में परमेश्वर के खोए हुए मनुष्यों को ढूँढ़ने के मिशन पर बल दिया गया था। तीसरी कहानी में ध्यान इस बात पर केंद्रित हुआ कि जब कोई खोया हुआ मनुष्य मिल जाता है, तो क्या होता है। यह कहानी सामान्यतः उड़ाऊ पुत्र के दृष्टान्त के नाम से जानी जाती है (लूका अध्याय 15 आयत 11 से 32)।

यीशु के अनुसार, एक धनी व्यक्ति के दो पुत्र थे। छोटे पुत्र ने अपनी विरासत की माँग की, और उसे प्राप्त करने के थोड़े समय बाद घर छोड़ दिया। वह एक दूर देश चला गया, जहाँ उसने अपना सारा धन उच्छृंखल और पापपूर्ण जीवन में उड़ा दिया। जब उस देश में भयंकर अकाल पड़ा, तो वह पुत्र ऐसी दशा में पहुँच गया कि सूअरों के झुंड के साथ सूअरबाड़े में पड़ा था, और उन सूअरों के पास उससे अधिक खाने को था। उसी सूअरबाड़े में उस भटके हुए व्यक्ति का हृदय बदल गया।

“जब वह होश में आया, तो उसने कहा, ‘मेरे पिता के कितने मजदूरों के पास आवश्यकता से अधिक भोजन है, और मैं यहाँ भूख से मर रहा हूँ! मैं उठकर अपने पिता के पास जाऊँगा और उससे कहूँगा: पिता, मैंने स्वर्ग के विरुद्ध और आपके विरुद्ध पाप किया है। अब मैं आपका पुत्र कहलाने योग्य नहीं रहा; मुझे अपने मजदूरों में से एक के समान रख लीजिए।’ तब वह उठकर अपने पिता के पास चला” (लूका अध्याय 15 आयत 17 से 20)।

“परन्तु जब वह अभी बहुत दूर ही था, तो उसके पिता ने उसे देखा और उस पर तरस खाया; वह दौड़कर अपने पुत्र के पास गया, उसे गले लगाया और चूमा। पुत्र ने उससे कहा, ‘पिता, मैंने स्वर्ग के विरुद्ध और आपके विरुद्ध पाप किया है। अब मैं आपका पुत्र कहलाने योग्य नहीं

रहा।' परन्तु पिता ने अपने दासों से कहा, 'जल्दी! सबसे उत्तम वस्त्र लाओ और इसे पहना दो। इसके हाथ में अंगूठी पहना दो और इसके पैरों में जूते पहना दो। पाला हुआ बछड़ा लाओ और उसे मारो। आओ, हम भोज करें और आनन्द मनाएँ। क्योंकि मेरा यह पुत्र मरा हुआ था और फिर जीवित हो गया है; यह खो गया था और अब मिल गया है।' तब वे आनन्द मनाने लगे" (लूका अध्याय 15 आयत 20 से 24)।

ध्यान दीजिए कि पिता ने अपने लौटकर आए पुत्र के साथ कैसा व्यवहार किया। उसने अपने पुत्र को तब देख लिया जब वह अभी घर से कुछ दूरी पर ही था। पिता उसकी राह देख रहा था, और जब उसकी दृष्टि उस लड़के पर पड़ी, तो उसका हृदय करुणा से भर गया। उसका हृदय अपने पुत्र के लिए तड़प उठा। वह उसे मिलने के लिए दौड़ा, जिससे यह प्रकट हुआ कि वह अपने पुत्र के साथ फिर से संबंध स्थापित करने के लिए कितना उत्सुक था। फिर उसने उसे चूमा। मूल भाषा में यह भाव है कि पिता ने अपने पुत्र को बार-बार चूमकर उसके प्रति गहरा कोमल प्रेम और स्नेह प्रकट किया। पुत्र के निंदनीय व्यवहार ने उसके पिता का प्रेम उससे नहीं छीना था।

ध्यान रखिए कि यह वही गंदा, दुर्गन्धयुक्त पुत्र है—जो अभी-अभी सूअरबाड़े से आया था—जिसने अपने पिता का धन वेश्याओं और उच्छृंखल जीवन में बर्बाद कर दिया था। वह ठीक वैसा ही व्यक्ति था जिसके साथ भोजन करने के कारण फरीसी यीशु की निंदा करते थे।

उड़ाऊ पुत्र अपने पाप के विषय में बात करना चाहता था। परन्तु पिता ने उसके अनेक अपराधों का कोई उल्लेख नहीं किया। वह जानता था कि उसका पुत्र अपने किए पर पश्चाताप कर रहा है। जो फरीसी यीशु को यह कहानी सुनाते हुए सुन रहे थे, वे पिता की इस चुप्पी से भयभीत हो गए होंगे। वे तब तक क्षमा नहीं करते थे जब तक बदला और क्षतिपूर्ति न हो जाए।

फिर पिता ने अपने दासों को आदेश दिया कि वे उसके पुत्र को वस्त्र, अंगूठी और जूते दें। जिन्होंने यीशु को यह दृष्टान्त सुनाते हुए सुना, वे भविष्यद्वक्ता जकर्याह की लिखी बातों से परिचित थे। उसने एक दर्शन का वर्णन किया है जो परमेश्वर ने उसे दिया था, जिसमें वस्त्र बदलने का अर्थ पाप को दूर किया जाना था (जकर्याह अध्याय 3 आयत 4)। यीशु के सुनने वाले यह भी जानते थे कि अंगूठियाँ पुरुषों को सम्मान और प्रतिष्ठा के चिन्ह के रूप में दी जाती थीं। उसके सुनने वाले यह भी समझते थे कि जूते स्वतंत्रता का प्रतीक थे। जब

युद्धबंदियों को मुक्त किया जाता था, तो उनके जूते, जो बंदीगृह के समय उनसे ले लिए गए थे, उन्हें वापस दे दिए जाते थे।

अपने शब्दों के द्वारा, यीशु ने एक पापी पुत्र को उसके पिता के प्रेम के कारण उसके पुत्रत्व की स्थिति में पूर्ण रूप से पुनर्स्थापित होते हुए चित्रित किया।

याद रखिए कि यीशु ने यह दृष्टान्त क्यों सुनाया था—उन फरीसियों को उत्तर देने के लिए जो पापियों के साथ उसके मेलजोल की आलोचना कर रहे थे। यीशु का संदेश स्पष्ट था। हर चुंगी लेने वाला और हर पापी, जिनके साथ यीशु ने पृथ्वी पर अपने समय में संबंध रखा, प्रभु के लिए मूल्यवान थे। यीशु, जो परमेश्वर है और हमें परमेश्वर को प्रकट करता है, उनमें से प्रत्येक को ढूँढ़ने और उद्धार करने आया था। यद्यपि वे पाप के सूअरबाड़े में खोए हुए थे, फिर भी ये लोग परमेश्वर द्वारा रचे गए और उससे प्रेम पाए हुए थे। उनके पास यह सामर्थ्य थी कि क्रूस की शक्ति के द्वारा वे निष्कलंक पुत्रों और पुत्रियों में परिवर्तित किए जाएँ।

मैं यह नहीं कह रहा कि सभी लोग, चाहे उनका व्यवहार या विश्वास कुछ भी हो, परमेश्वर की संतान हैं। सभी लोग परमेश्वर की सृष्टि हैं और उसके पुत्र बनने की संभावना रखते हैं, परन्तु सभी पाप के दोषी हैं। अपनी उस संभावना को वास्तविकता में बदलने के लिए, पुरुषों और स्त्रियों को पाप से मन फिराकर और मसीह तथा उसके क्रूस के बलिदान में विश्वास के द्वारा पिता के घर लौटना होगा। अन्यथा, वे अपने सृजित उद्देश्य से सदा के लिए खोए रहेंगे और परमेश्वर से अनन्तकाल के लिए अलग हो जाएँगे।

पाप और विद्रोह के सूअरबाड़े तक हमारी यात्रा ने हमसे परमेश्वर का प्रेम नहीं छीना है। पृथ्वी पर अपनी सेवा के दौरान और क्रूस पर यीशु के शब्द और कार्य यह स्पष्ट करते हैं: यद्यपि तुम सूअरबाड़े में हो, फिर भी मैं तुमसे प्रेम करता हूँ। यदि तुम मुझ पर विश्वास करके पिता के घर लौट आओगे, तो मैं तुम्हें शुद्ध कर दूँगा। मैं तुम्हें अपनी धार्मिकता के वस्त्र पहनाऊँगा। मैं तुम्हें उस पुत्रत्व, सम्मान और गरिमा की स्थिति में पुनर्स्थापित करूँगा जिसके लिए मैंने तुम्हारी रचना की है।

मैं घर लौट आया हूँ। फिर भी मुझे समस्याएँ क्यों हैं?

शायद तुम यह सोच रहे हो: “मैं सूअरबाड़े को छोड़ चुका हूँ। मैं मसीह में विश्वास के द्वारा पिता के घर लौट आया हूँ। तो फिर मुझे ये सारी परेशानियाँ क्यों हो रही हैं?” क्योंकि पाप से शापित पृथ्वी पर जीवन ऐसा ही है। यद्यपि हमारे हृदय सूअरबाड़े को छोड़ चुके हैं, फिर भी हम अब भी एक पतित संसार में रहते हैं और ऐसे वातावरण से उत्पन्न सभी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। जब यीशु लौटेगा, तब परमेश्वर अंततः संसार को पाप के हर चिन्ह और उससे उत्पन्न होने वाली भ्रष्टता से शुद्ध कर देगा। परन्तु इस समय यह उसका मुख्य ध्यान नहीं है। इस वर्तमान युग में परमेश्वर का प्राथमिक उद्देश्य मनुष्यों के हृदयों को फिर से अपने अधीनता और निर्भरता में लाना है, न कि सूअरबाड़े में जीवन को बेहतर बनाना।

ध्यान दीजिए कि उड़ाऊ पुत्र के पिता ने उसके दूर रहने के समय सूअरबाड़े को साफ नहीं किया और न ही उसके कष्टों को दूर किया। इसका अर्थ यह नहीं था कि वह अपने पुत्र से प्रेम नहीं करता था। परन्तु पिता का लक्ष्य यह नहीं था कि उसका पुत्र उससे अलग होकर एक अद्भुत और चिंतारहित जीवन जिए। उसकी इच्छा यह थी कि उसका पुत्र घर वापस आए।

स्पष्ट है कि उसके विद्रोही कार्यों के परिणामों ने उस पुत्र को होश में ला दिया। यीशु ने कहा कि उड़ाऊ पुत्र सूअरबाड़े में होश में आया। यदि उसके पिता ने उस युवक के अपनी वास्तविक स्थिति को समझने से पहले ही सूअरबाड़े का नवीनीकरण कर दिया होता, तो संभव है कि उसकी सोच कभी न बदलती। उस गंदगी को साफ कर देना उसके विद्रोही पाप के परिणामों को छिपा देता।

परमेश्वर वर्तमान में इस संसार के जीवन की कीचड़ और गंदगी को साफ करके उसे बेहतर नहीं बना रहा है, आंशिक रूप से इसलिए क्योंकि वह चाहता है कि मानवजाति पाप के विनाशकारी परिणामों को देखे। यद्यपि प्रभु लोगों की पीड़ा में कोई आनन्द नहीं लेता, फिर भी उसकी आशा यह है कि पुरुष और स्त्रियाँ जाग जाएँ और अंतिम विनाश का अनुभव करने से पहले उसकी ओर लौट आएँ—अर्थात् नरक में परमेश्वर से अनन्तकालीन अलगाव।



इस बिंदु पर, आप यह पूछ सकते हैं: “मैं समझता हूँ कि इस जीवन की उथल-पुथल के पीछे परमेश्वर नहीं है और वह यीशु के फिर से आने तक इसका अंत नहीं करने वाला। परन्तु क्या इसका अर्थ यह है कि अभी मेरे लिए उसके पास कोई सहायता नहीं है?”

ऐसा बिल्कुल नहीं है।

परन्तु इस पतित संसार में पिता के घर की सामर्थ्य और प्रबंध तक पहुँच पाने के लिए, तुम्हें यह समझना होगा कि सूअरबाड़े जैसी परिस्थितियों के बीच परमेश्वर क्या करता है। तब तुम उसके साथ सहयोग कर सकोगे जब वह कार्य कर रहा होगा। अगले कुछ अध्यायों में, जब हम “क्या” के प्रश्न का उत्तर देंगे, तब हम चर्चा करेंगे कि वह किस प्रकार कार्य करता है।

5

क्या का प्रश्न

लोग केवल “यह क्यों हुआ?” के प्रश्न से संघर्ष नहीं करते, बल्कि वे “परमेश्वर क्या कर रहा है?” इस प्रश्न से भी जूझते हैं। दुःख की बात है कि जीवन की चुनौतियों के बीच परमेश्वर किस प्रकार कार्य करता है, इसके विषय में बहुत-सी गलत धारणाएँ हैं। इस भाग में, हम “क्या” के प्रश्न के गलत उत्तरों की पहचान करेंगे और फिर बाइबल से सही उत्तर प्रस्तुत करेंगे।

गलत उत्तर: परमेश्वर परिस्थितियों के द्वारा बोलता है।

बहुत से लोग मानते हैं कि परमेश्वर हमारी भौतिक परिस्थितियों के द्वारा हमें जानकारी देता है। इसलिए वे अपनी कठिन परिस्थिति को देखते हैं और जो कुछ दिखाई देता है, उसके आधार पर निष्कर्ष निकालते हैं। परन्तु तुम अपनी परिस्थिति को देखकर “क्यों” या “क्या” के प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकते।

- क्योंकि कठिन परिस्थितियाँ परमेश्वर द्वारा व्यवस्थित नहीं की जातीं, इसलिए हम निश्चित हो सकते हैं कि वह उनके द्वारा हमें कोई संदेश नहीं भेज रहा है।

- परमेश्वर ने हमसे कहा है कि “हम विश्वास से चलें, न कि देखने या बाहरी रूप से” (2 कुरिन्थियों अध्याय 5 आयत 7)। यदि परमेश्वर हमारी परिस्थिति में दिखाई देने वाली बातों

के द्वारा हमें जानकारी और दिशा देने का प्रयास करता, तो वह हमें दिए गए अपने ही निर्देश का विरोध करता।

• परमेश्वर हमसे अपने लिखित वचन के द्वारा बोलता है। उसका वचन हमारे पाँव के लिए दीपक और हमारे मार्ग के लिए ज्योति है (भजन संहिता अध्याय 119 आयत 105)। “हे मेरे पुत्र, अपने पिता की [परमेश्वर द्वारा दी गई] आज्ञा को मान, और अपनी माता [जिसने परमेश्वर की शिक्षा दी है] उस की व्यवस्था को न छोड़... जब तू चलेगा, [तेरे माता-पिता के द्वारा सिखाया गया परमेश्वर का वचन] तेरा मार्गदर्शन करेगा; जब तू सोएगा, वह तेरी रक्षा करेगा; और जब तू जागेगा, वह तुझसे बातें करेगा। क्योंकि आज्ञा दीपक है, और व्यवस्था की पूरी शिक्षा ज्योति है” (नीतिवचन अध्याय 6 आयत 20 से 23)।

बाइबल में कई ऐसे उदाहरण मिलते हैं जहाँ लोगों ने अपनी परिस्थितियों को देखकर “क्या” के प्रश्न का उत्तर देने का प्रयास किया। हर मामले में उन्होंने गलत निष्कर्ष निकाले। ऐसा ही एक प्रसंग तब हुआ जब प्रेरित पौलुस का पानी का बेड़ा टूट गया और वह तथा उसके साथियों ने तैरकर सुरक्षित रूप से एक निकटवर्ती द्वीप तक पहुँचकर अपनी जान बचाई।

“जब हम सुरक्षित किनारे पर पहुँच गए, तब हमें पता चला कि हम माल्टा द्वीप पर हैं। वहाँ के लोगों ने हमारे साथ बड़ी कृपा दिखाई। ठंड और वर्षा हो रही थी, इसलिए उन्होंने किनारे पर आग जलाई ताकि हमारा स्वागत करें और हमें गर्माहट मिले। जब पौलुस लकड़ियों का एक गट्ठर इकट्ठा करके आग पर रख रहा था, तो गर्मी से निकलकर एक विषैला साँप उसके हाथ से लिपट गया। द्वीप के लोगों ने उसे लटका हुआ देखकर आपस में कहा, ‘निःसंदेह यह कोई हत्यारा है! यद्यपि यह समुद्र से बच निकला, पर न्याय इसे जीवित नहीं रहने देगा।’ परन्तु पौलुस ने साँप को झटककर आग में फेंक दिया और उसे कोई हानि नहीं हुई। लोग प्रतीक्षा करते रहे कि वह सूज जाएगा या अचानक मरकर गिर पड़ेगा। पर जब उन्होंने बहुत देर तक प्रतीक्षा की और देखा कि उसे कोई हानि नहीं हुई, तो उन्होंने अपना विचार बदल लिया और निश्चय किया कि वह कोई देवता है” (प्रेरितों के काम अध्याय 28 आयत 1 से 6)।

इन द्वीपवासियों ने पौलुस को समुद्र में डूबने से बचते हुए देखा, परन्तु फिर एक घातक साँप को उसे काटते हुए भी देखा। उन्होंने तर्क लगाया कि वह एक हत्यारा है जो पानी के बेड़े से टूटने से बचकर मृत्यु से निकल आया, पर अब साँप के काटने से न्याय ने उसे पकड़ लिया है। परन्तु जब पौलुस पर साँप के विष का कोई प्रभाव नहीं हुआ, तो उन्होंने लोगों ने निश्चय

किया कि वह कोई देवता है। कुछ ही मिनटों में, इन लोगों ने पौलुस और उसके साथ हुई घटना के बारे में जो कुछ उन्होंने देखा उसके आधार पर दो बिल्कुल भिन्न निष्कर्ष निकाल लिए—और दोनों ही निष्कर्ष गलत थे।

कुछ लोग इसी प्रकार अपना जीवन जीते हैं। वे मान लेते हैं कि उनकी परिस्थिति में होने वाला हर परिवर्तन परमेश्वर का उनसे संवाद करने का तरीका है। इस उदाहरण पर विचार कीजिए: कोई प्रियजन अस्पताल के बिस्तर पर पड़ा है। उसका रक्तचाप बहुत अधिक बढ़ जाता है और परिवार पूछता है: “परमेश्वर क्या कह रहा है?” “परमेश्वर क्या कर रहा है?” फिर उस व्यक्ति का रक्तचाप बहुत कम हो जाता है और परिवार प्रतिक्रिया देता है: “अब प्रभु हमें क्या दिखाने की कोशिश कर रहा है?” परमेश्वर इस अस्पताल के दृश्य के द्वारा कुछ प्रकट करने की कोशिश नहीं कर रहा है। उनके प्रियजन का अस्थिर रक्तचाप प्रभु का कोई संदेश नहीं है। यह पाप से शापित संसार में जीवन का परिणाम है।

एक और उदाहरण पर विचार कीजिए। जब यहोशू इब्रानी लोगों को कनान में ले गया, तो परमेश्वर ने उन्हें आज्ञा दी थी कि वे उस क्षेत्र की किसी भी जाति के साथ कोई संधि न करें। जब इस्राएल उस भूमि को जीतने और उसमें बसने लगा, तो एक विशेष समूह, गिबोनियों ने, स्वयं को बचाने के लिए छल का सहारा लेने का निर्णय किया। यद्यपि वे पास ही रहते थे, उन्होंने यहोशू के पास ऐसे दूत भेजे जो ऐसे वस्त्र और सामान पहने हुए थे मानो उन्होंने बहुत लंबी यात्रा की हो।

“उन्होंने... अपने गधों पर पुराने काठी के थैले और फटे-पुराने मदिरा के मशक लादे। उन्होंने चिथड़े वस्त्र और घिसे-पिटे, पैबंद लगे हुए जूते पहने। और अपने भोजन के लिए सूखी और फफूँदी लगी हुई रोटियाँ साथ लीं। जब वे गिलगाल में इस्राएल के डेरे में पहुँचे, तो उन्होंने यहोशू और इस्राएल के लोगों से कहा, ‘हम दूर देश से आए हैं ताकि तुमसे शांति की संधि कर सकें’” (यहोशू अध्याय 9 आयत 4 से 6)।

इस्राएल के अगुवों ने उनके द्वारा प्रस्तुत भौतिक प्रमाणों की जाँच की, उन लोगों की कहानी पर विश्वास कर लिया, और गिबोनियों के साथ एक बाध्यकारी समझौता कर लिया—ठीक वही काम जो परमेश्वर ने उन्हें न करने के लिए कहा था। ध्यान दीजिए कि अगुवों ने अपने सामने दिखाई देने वाली बातों के आधार पर परिस्थिति का मूल्यांकन किया, परमेश्वर के

वचन को खोजने के बजाय: “इसलिए इस्राएल के अगुवों ने उनकी रोटियों को देखा, परन्तु उन्होंने प्रभु से परामर्श नहीं किया” (यहोशू अध्याय 9 आयत 14)।

इस घटना में हम फिर देखते हैं कि भौतिक प्रमाण गलत जानकारी दे सकते हैं और परमेश्वर के अपने लोगों को भी गुमराह कर सकते हैं।

तुम अपनी परिस्थिति का मूल्यांकन इस आधार पर नहीं कर सकते कि तुम क्या देखते और क्या महसूस करते हो। बाइबल ही परमेश्वर और उसके कार्य करने के तरीकों के विषय में हमारे पास पूर्णतः भरोसेमंद जानकारी का एकमात्र स्रोत है। तुम्हें अपनी परिस्थितियों का निर्णय इस आधार पर करना चाहिए कि परमेश्वर अपने लिखित वचन में क्या कहता है। आगे के अध्यायों में हम कुछ ऐसे उदाहरणों पर विचार करेंगे जो प्रकट करेंगे कि जीवन की कठिनाइयों में परमेश्वर किस प्रकार कार्य करता है। वे हमें अपनी परिस्थितियों का सही मूल्यांकन करने में सहायता करेंगे।

गलत उत्तर: परिस्थितियाँ हमें परमेश्वर की इच्छा दिखाती हैं।

कुछ अन्य लोग मानते हैं कि परमेश्वर अपनी इच्छा को भौतिक परिस्थितियों के द्वारा प्रकट करता है। वे आश्वस्त होते हैं कि यदि कोई घटना घटित होती है, तो वह अवश्य परमेश्वर की इच्छा होगी। परन्तु इस जीवन में बहुत-सी बातें ऐसी होती हैं जो परमेश्वर की इच्छा नहीं होतीं। कुछ बातें इसलिए होती हैं क्योंकि शैतान मनुष्यों को चुराने, मारने और नष्ट करने का प्रयास कर रहा है। कुछ इसलिए होती हैं क्योंकि मनुष्य परमेश्वर के विरुद्ध विद्रोह करते हैं और घृणित कार्य करते हैं। और कुछ कठिनाइयाँ इस पाप से शापित पृथ्वी में कार्य कर रही अनियमित प्रक्रियाओं का परिणाम होती हैं। (यदि आवश्यक हो, तो अध्याय 1 को फिर से देखिए।)

कई वर्ष पहले, मैंने एक घर में होने वाली बाइबल अध्ययन सभा में भाग लिया। एक शाम दो युवतियों ने आने का निर्णय किया, परन्तु वे कभी पहुँची ही नहीं। बाद में उन्होंने कहा कि वे घर नहीं ढूँढ़ सकीं, और उनके मन में इसका अर्थ यह था कि उस अध्ययन में भाग लेना परमेश्वर की इच्छा नहीं थी। परन्तु उनका घर न ढूँढ़ पाना प्रभु की इच्छा की अभिव्यक्ति

नहीं था। या तो वे दिशा-निर्देशों का पालन करने में कुशल नहीं थीं, या फिर रास्ते में उन्होंने गलत मोड़ ले लिया था।

यह अच्छी बात थी कि उनेसिफुरुस नामक व्यक्ति ने अपनी भौतिक परिस्थिति का उपयोग परमेश्वर की इच्छा निर्धारित करने के लिए नहीं किया। यदि उसने ऐसा किया होता, तो वह रोम में कैद प्रेरित पौलुस के लिए महान आशीष न बन पाता।

“प्रभु उनेसिफुरुस और उसके सारे परिवार पर विशेष दया करे, क्योंकि उसने बार-बार मुझसे मिलकर मेरा उत्साह बढ़ाया। वह इस बात से कभी लज्जित नहीं हुआ कि मैं कैद में था। जब वह रोम आया, तो उसने हर जगह खोजा जब तक मुझे पा नहीं लिया” (2 तीमथियुस अध्याय 1 आयत 16 से 17)।

ध्यान दीजिए कि उनेसिफुरुस को पौलुस को ढूँढ़ने के लिए पूरे नगर में खोज करनी पड़ी। यदि उसने अपनी परिस्थितियों का मूल्यांकन उसी प्रकार किया होता जैसे ऊपर बताई गई युवतियों ने किया, तो वह पौलुस को कभी नहीं ढूँढ़ पाता। उनेसिफुरुस तो पहली ही जगह पर पौलुस को न पाकर हार मान लेता, यह सोचकर कि प्रेरित को ढूँढ़ना परमेश्वर की इच्छा नहीं है।

परमेश्वर हमें अपने लिखित वचन के अनुरूप अपने आत्मा के द्वारा मार्गदर्शन देता है। परन्तु वह किसी और दिन का विषय है। इस समय मुख्य बात यह है: तुम “क्या” के प्रश्न का उत्तर पाने के लिए अपनी परिस्थितियों की ओर नहीं देख सकते। तुम्हें यह जानने के लिए बाइबल में दी गई जानकारी की ओर देखना होगा कि परमेश्वर क्या करता है और जीवन की घटनाओं में किस प्रकार कार्य करता है।

गलत उत्तर: परमेश्वर परिस्थितियों के द्वारा हम पर कार्य करता है।

कुछ लोग मानते हैं कि परमेश्वर परिस्थितियों के द्वारा हम पर कार्य करता है, परन्तु यह सही नहीं है। बाइबल में कहीं भी यह नहीं कहा गया कि परमेश्वर हम पर कार्य करता है।

इसके बजाय, पवित्रशास्त्र कहता है कि परमेश्वर अपने आत्मा और अपने वचन के द्वारा हमारे भीतर कार्य करता है। इन पदों पर विचार कीजिए।

“मुझे इस बात का पूरा भरोसा है कि जिसने तुम में अच्छा कार्य आरम्भ किया है, वही उसे मसीह यीशु के दिन तक पूरा करेगा” (फिलिप्पियों अध्याय 1 आयत 6)।

“अपने उद्धार को भय और काँपते हुए कार्यरूप में लाते रहो, क्योंकि परमेश्वर ही है जो अपने अच्छे उद्देश्य के अनुसार तुम में इच्छा और कार्य दोनों उत्पन्न करता है” (फिलिप्पियों अध्याय 2 आयत 12 से 13)।

“शांति का परमेश्वर... तुम्हें अपनी इच्छा पूरी करने के लिए हर अच्छी वस्तु से सुसज्जित करे, और यीशु मसीह के द्वारा हमारे भीतर वह कार्य करे जो उसकी दृष्टि में भाता है” (इब्रानियों अध्याय 13 आयत 20 से 21)।

“और हम सब, जिनके चेहरे पर पर्दा नहीं है, [क्योंकि हम] परमेश्वर के वचन में दर्पण के समान प्रभु की महिमा को निरंतर देखते रहते हैं, उसी के स्वरूप में लगातार रूपांतरित किए जा रहे हैं, एक महिमा से दूसरी बढ़ती हुई महिमा में; [क्योंकि यह] प्रभु की ओर से होता है [जो] आत्मा है” (2 कुरिन्थियों अध्याय 3 आयत 18)।

“और जैसे-जैसे प्रभु का आत्मा हमारे भीतर कार्य करता है, हम अधिक से अधिक उसके समान बनते जाते हैं और उसकी महिमा को और अधिक प्रतिबिंबित करते हैं” (2 कुरिन्थियों अध्याय 3 आयत 18)।

“और हम परमेश्वर का धन्यवाद करना कभी नहीं छोड़ते कि जब हमने तुम्हें उसका संदेश सुनाया, तो तुमने हमारे शब्दों को केवल मनुष्यों के शब्द नहीं समझा। तुमने उन्हें परमेश्वर के वास्तविक वचन के रूप में स्वीकार किया—और निस्संदेह वे वही थे। और यह वचन तुम विश्वास करने वालों में निरंतर कार्य करता रहता है” (1 थिस्सलुनीकियों अध्याय 2 आयत 13)।

यदि तुम यह सोचते हो कि परमेश्वर बाहरी परिस्थितियों के द्वारा तुम पर कार्य करता है, तो तुम लगातार अपने वातावरण को देखकर यह समझने की कोशिश करोगे कि परमेश्वर क्या कर रहा है, और फिर उन लोगों की तरह गलत निष्कर्ष निकालोगे जिनका उल्लेख पिछले भाग में किया गया।

तुम यह पूछ सकते हो: “क्या परमेश्वर हमें परखने, सिखाने, शुद्ध करने और सिद्ध बनाने के लिए कठिन परिस्थितियों को व्यवस्थित नहीं करता या उनकी अनुमति नहीं देता?” परमेश्वर वास्तव में हमें परखता, सिखाता, शुद्ध करता और सिद्ध बनाता है, परन्तु वह यह अपने वचन और अपने आत्मा के द्वारा, जो हमारे भीतर कार्य करते हैं, करता है; कठिन परिस्थितियों के द्वारा नहीं। (इन प्रत्येक बिंदुओं की पूर्ण समीक्षा के लिए, परमेश्वर अच्छा है... और अच्छा मतलब अच्छा है पढ़ें।)



अब जबकि हमने “क्या” के प्रश्न के कुछ गलत उत्तरों पर विचार कर लिया है, आइए अब बाइबल के अनुसार इस प्रश्न का उत्तर दें।



क्या के प्रश्न का सही उत्तर

केवल इसलिए कि परिस्थितियाँ हमें यह नहीं बताती कि परमेश्वर क्या कर रहा है, इसका यह अर्थ नहीं कि हम जान नहीं सकते—बाइबल हमें बताती है। हो सकता है कि वह किसी विशेष परिस्थिति के बारे में विशिष्ट विवरण न दे, परन्तु जब हम परमेश्वर के वचन का अध्ययन करते हैं, तो हम उन सामान्य सिद्धांतों को देख सकते हैं जिनके अनुसार परमेश्वर हर परिस्थिति में कार्य करता है।

बाइबल ऐसे विवरणों से भरी हुई है जहाँ परमेश्वर ने कठिन समयों में कार्य करके अद्भुत परिणाम उत्पन्न किए—अपने लिए महान महिमा, जितने अधिक लोगों के लिए संभव हो उतनी भलाई, और वास्तव में बुरी घटनाओं में से वास्तविक भलाई। इन कथाओं में हम परमेश्वर को निम्नलिखित सिद्धांतों के अनुसार कार्य करते हुए देखते हैं:

- परमेश्वर का बहुत-सा कार्य तब तक अदृश्य रहता है जब तक तुम अंततः उसके दिखाई देने वाले परिणाम नहीं देख लेते। केवल इसलिए कि तुम कुछ होते हुए नहीं देख सकते, इसका अर्थ यह नहीं कि कुछ हो ही नहीं रहा।

- प्रभु सही समय पर कार्य करता है।

- वह अक्सर अल्पकालिक आशीष (तुरंत परेशानी समाप्त कर देना) को स्थगित कर देता है ताकि दीर्घकालिक और अनन्त परिणाम उत्पन्न हों, क्योंकि वह मानवीय चुनावों का उपयोग करके उन्हें अपने उद्देश्यों की पूर्ति में लगाता है।

- परमेश्वर वास्तविक बुराई में से वास्तविक भलाई उत्पन्न करता है।

- वह तुम्हें तब तक संभालकर ले जाएगा जब तक तुम्हें बाहर न निकाल ले। परमेश्वर बहुत कठिन परिस्थितियों के बीच भी तुम्हें उन्नति करने योग्य बना सकता है।

यीशु हमें दिखाता है कि परमेश्वर कैसे कार्य करता है।

कुछ परिस्थितियों में यीशु की प्रतिक्रिया हमें यह समझ देती है कि परमेश्वर किस प्रकार कार्य करता है। जब हम देखते हैं कि यीशु (जो मानवीय देह में परमेश्वर था) उस ने क्या किया, तो हम इन सिद्धांतों को कार्यरत देखते हैं।

इसका एक अच्छा उदाहरण उस घटना में दिखाई देता है जहाँ यीशु ने रोटियों और मछलियों को बढ़ाया। पवित्रशास्त्र कहता है कि पाँच हज़ार पुरुषों की एक बड़ी भीड़, स्त्रियों और बच्चों के अतिरिक्त, पूरे दिन यीशु के पीछे-पीछे चली थी।

“उस शाम चेलों ने उसके पास आकर कहा, ‘यह सुनसान स्थान है, और बहुत देर हो गई है। भीड़ को जाने दीजिए ताकि वे गाँवों में जाकर अपने लिए भोजन खरीद सकें।’ परन्तु यीशु ने उत्तर दिया, ‘इसकी आवश्यकता नहीं—तुम ही उन्हें भोजन दो’” (मत्ती अध्याय 14 आयत 15 से 16)।

चेलों के पास इतनी बड़ी भीड़ के लिए भोजन की व्यवस्था नहीं थी। परिणामस्वरूप, वे कमी का सामना कर रहे थे। इससे “क्यों” का प्रश्न उठता है।

“इस संसार में कमी क्यों है?” पर्याप्त भोजन का अभाव पृथ्वी पर आदम के पाप के कारण आए शाप का एक भाग है। “उस विशेष दिन कमी क्यों थी?” क्योंकि उस क्षेत्र में उपलब्ध साधनों की कमी की पूर्ति के लिए कोई अपने साथ भोजन लेकर नहीं आया था।

“तब यीशु ने अपनी आँखें उठाकर एक बड़ी भीड़ को अपनी ओर आते देखा, और फिलिप्पुस से कहा, ‘हम कहाँ से रोटी खरीदें कि ये लोग खा सकें?’ यह उसने उसकी परीक्षा लेने के लिए कहा, क्योंकि वह स्वयं जानता था कि वह क्या करने वाला है” (यूहन्ना अध्याय 6 आयत 5 से 6)।

यद्यपि यीशु किसी भी प्रकार से इस अभाव के पीछे नहीं था, फिर भी उसने इसमें अपने बारह चेलों की भलाई के लिए उपयोग करने का एक अवसर देखा। यीशु पहले ही उन्हें यह सिखा चुका था कि स्वर्ग में उनका एक पिता है जो अपने बच्चों को, जब वे उसे खोजते हैं, आवश्यक प्रबंध देता है। उसका यह प्रश्न फिलिप्पुस और अन्य चेलों को परमेश्वर और उसकी प्रतिज्ञा में अपने विश्वास को प्रदर्शित और दृढ़ करने का अवसर देता था।

वे यह उत्तर दे सकते थे: “हमें नहीं पता कि भोजन कहाँ से आएगा, परन्तु हमें पूरा विश्वास है कि हमारा स्वर्गीय पिता हमारी सहायता करेगा।”

बहुत से लोग गलत रूप से मानते हैं कि परमेश्वर हमें परखने के लिए जीवन की कठिनाइयों को व्यवस्थित करता है। परन्तु परमेश्वर की परीक्षा कभी स्वयं परिस्थिति नहीं होती। बल्कि, उसकी परीक्षा उस परिस्थिति के बीच उसका वचन होता है। इस घटना में यीशु ने अपने शब्दों के द्वारा अपने चेलों की परीक्षा ली: क्या तुम इस बड़े अभाव के सामने भी उस बात पर विश्वास करोगे जो मैंने तुम्हें तुम्हारे पिता के विषय में बताई है?

चेलों ने वही गलती की जो चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों का सामना करते समय बहुत से लोग करते हैं—उन्होंने यीशु की पहले दी गई शिक्षाओं को याद नहीं रखा। उन्होंने अपनी समस्याओं का समाधान उस आधार पर खोजने का प्रयास किया जो वे देख सकते थे, और फिर उसी से निष्कर्ष निकाले।

“फिलिप्पुस ने उत्तर दिया, ‘इन सबको खिलाने के लिए तो बहुत बड़ी धनराशि चाहिए!’ तब शमौन पतरस का भाई अन्द्रियास बोला, ‘यहाँ एक छोटा लड़का है जिसके पास जौ की पाँच रोटियाँ और दो मछलियाँ हैं। परन्तु इतनी बड़ी भीड़ के लिए यह क्या हैं?’” (यूहन्ना अध्याय 6 आयत 7 से 8)।

फिलिप्पुस यह सोचने लगा कि यदि उनके पास पर्याप्त धन होता तो वे इस आवश्यकता को कैसे पूरा कर सकते थे। अन्द्रियास ने उस बात को ही तर्क से अस्वीकार कर दिया जो वास्तव में समस्या का समाधान बनने वाली थी—एक छोटे लड़के का भोजन। दोनों में से किसी ने भी अपने पिता की उस प्रतिज्ञा के विषय में नहीं सोचा कि वह उनकी सहायता करेगा।

परमेश्वर जानता है कि वह क्या कर रहा है।

जब यीशु ने फिलिप्पुस से पूछा कि वे भीड़ के लिए रोटी कहाँ से लाएँगे, तब वह पहले से ही जानता था कि वह क्या करने वाला है। परन्तु उसने अपने चेलों को यह नहीं बताया कि उसके मन में क्या योजना है। यद्यपि चेले उन विशिष्ट कार्यों को नहीं जानते थे जो प्रभु करने वाला था, फिर भी वे इस तथ्य में विश्राम कर सकते थे कि परमेश्वर हमेशा जानता है कि वह क्या करने जा रहा है, भले ही वह हमें ठीक-ठीक विवरण न बताए।

यह भी ध्यान दीजिए कि यद्यपि यीशु उस आवश्यकता को पूरा करने की योजना बना चुका था, फिर भी उसने तुरंत भोजन उपलब्ध नहीं कराया। क्यों? क्योंकि परमेश्वर सही समय पर कार्य करता है, आवश्यक नहीं कि उसी क्षण। यीशु ने चेलों को निर्देश दिया कि सब लोगों को वहाँ की घास पर बैठा दें। निस्संदेह, दस हजार लोगों को बैठाने में कुछ समय लगा होगा। जब सब लोग बैठ गए, तब यीशु ने उस छोटे लड़के की रोटियाँ और मछलियाँ लीं और पिता को धन्यवाद दिया। फिर उसने वह भोजन अपने चेलों को दिया, जिन्होंने पहाड़ियों पर बैठे लोगों में उसे बाँटा।

“यीशु ने आदेश दिया, ‘सब लोगों को बैठा दो।’ तब सब लोग—केवल पुरुष ही पाँच हजार थे—घास वाली ढलानों पर बैठ गए। फिर यीशु ने रोटियाँ लीं, परमेश्वर का धन्यवाद किया, और लोगों में बाँट दीं। उसके बाद उसने मछलियों के साथ भी ऐसा ही किया। और सबने खाया और तृप्त हो गए” (यूहन्ना अध्याय 6 आयत 10 से 11)।

“फिर यीशु ने अपने चेलों से कहा, ‘अब बचे हुए टुकड़ों को इकट्ठा करो, ताकि कुछ भी व्यर्थ न जाए।’ आरम्भ में केवल पाँच जौ की रोटियाँ थीं, परन्तु लोगों के न खाए हुए रोटी के टुकड़ों से बारह टोकरियाँ भर गईं” (यूहन्ना अध्याय 6 आयत 12 से 13)।

विचार कीजिए कि यहाँ क्या हुआ और यह विवरण हमें इस बारे में क्या दिखाता है कि परमेश्वर किस प्रकार कार्य करता है। यीशु ने पाँच रोटियाँ और दो मछलियाँ लीं—जो स्पष्ट रूप से लगभग दस हजार लोगों को खिलाने के लिए पर्याप्त नहीं थीं— फिर भी यीशु ने इसे अपने हाथ में लिया और अपने पिता को धन्यवाद दिया। यद्यपि अभाव परमेश्वर की ओर से नहीं आता, फिर भी यीशु ने उसके लिए परमेश्वर को धन्यवाद दिया। उसने ऐसा क्यों किया? क्योंकि वह जानता था कि जो अपर्याप्त है, वह उसके पिता के हाथों में पर्याप्त से भी अधिक बन जाएगा। वह जानता था कि परमेश्वर वास्तविक बुराई (अपर्याप्त भोजन) में से वास्तविक भलाई (पूर्ण प्रबंध) उत्पन्न करेगा।

यीशु ने सबको बैठने में समय क्यों लगाया? उसने केवल भोजन पर प्रार्थना करके उसे बाँट क्यों नहीं दिया? यीशु चाहता था कि सब लोग बैठे हों ताकि सभी देख सकें कि केवल थोड़ा भोजन उपलब्ध है और सभी उसे अपने पिता को स्वीकार करते हुए देख सकें। क्योंकि सब कुछ व्यवस्थित रूप से किया गया, इसलिए सभी ने देखा कि क्या हुआ। जो भोजन बहुत जल्दी समाप्त हो जाना चाहिए था, वह समाप्त नहीं हुआ। हर कोई जान गया कि परमेश्वर ने एक चमत्कार किया है।

यद्यपि जब चेले अपनी समस्या लेकर यीशु के पास आए, तब उन्होंने तत्काल परिणाम नहीं देखे, इसका अर्थ यह नहीं था कि कुछ हो ही नहीं रहा था। यीशु के पास एक योजना थी और बातें अपने स्थान पर आ रही थीं। जब परिणाम अंततः दिखाई दिए, तब परमेश्वर को सर्वोच्च महिमा मिली और जितने अधिक लोगों की सहायता और आशीष संभव थी, उतनी हुई।

परमेश्वर का प्रबंध और छुटकारा हमेशा तुरंत नहीं आता, इसलिए नहीं कि परमेश्वर चाहता है कि लोग कष्ट सहें, बल्कि इसलिए कि वह देखता है कि समय का बीतना परिस्थिति को अधिकतम रूप से उपयोगी बनाएगा। इससे उसे अधिक महिमा मिलेगी और अधिक लोगों को अधिक भलाई पहुँचेगी। ध्यान रखिए कि यद्यपि इन लोगों को भोजन के लिए प्रतीक्षा करनी पड़ी, फिर भी कोई भूखा नहीं मरा, सभी ने भरपूर खाया, और यहाँ तक कि कुछ अतिरिक्त भोजन भी बच गया जिसे साथ ले जाया जा सकता था।

परमेश्वर कार्य कर रहा है।

यीशु परमेश्वर है और हमें परमेश्वर को प्रकट करता है, इसलिए जब हम देखते हैं कि उसने इस परिस्थिति को कैसे संभाला, तो हमें यह समझ मिलती है कि परमेश्वर कैसे कार्य करता है और जीवन की कठिनाइयों के बीच वह क्या करता है। यह जानकारी हमें जीवन की परीक्षाओं का सामना करते समय “क्या” के प्रश्न का उत्तर देने में सहायता कर सकती है।

केवल इसलिए कि तुम अपनी समस्याओं का समाधान नहीं समझ पा रहे, इसका अर्थ यह नहीं कि परमेश्वर के पास कोई योजना नहीं है। और केवल इसलिए कि तुम अपनी परिस्थिति में कुछ होता हुआ नहीं देख रहे, इसका अर्थ यह नहीं कि कुछ हो ही नहीं रहा। परमेश्वर पृथ्वी की रचना से पहले ही उन चुनौतियों को जानता था जिनका तुम सामना करोगे, और उसके पास पहले से ही ऐसी योजना है जिससे वह उन्हें अपनी अधिकतम महिमा और अधिकतम भलाई के उद्देश्यों की पूर्ति में लगा सके। वह पर्दे के पीछे कार्य कर रहा है।

यही हो रहा है। यही “क्या” के प्रश्न का उत्तर है।



अगले दो अध्याय हमें “क्यों” और “क्या” के प्रश्नों के सही उत्तर को और अधिक गहराई से समझने में सहायता करेंगे। हम वास्तविक लोगों के जीवन को देखेंगे जिन्होंने सचमुच की कठिनाइयों का सामना किया। जब हम उनकी कहानियों का अध्ययन करेंगे, तब हम देखेंगे कि परमेश्वर ने उनके जीवनों में उन्हीं सिद्धांतों के अनुसार कैसे कार्य किया, जिन्हें यीशु ने अपने चेलों की आवश्यकता के समय उनकी सहायता करते हुए प्रदर्शित किया।



यूसुफ की कहानी

यूसुफ की कहानी इस बात का एक उदाहरण है कि प्रभु जीवन की चुनौतियों के साथ क्या करता है। परमेश्वर ने यूसुफ की परिस्थितियों में कार्य करते हुए, पिछले अध्याय में बताए गए सिद्धांतों के अनुसार, अपने लिए अधिकतम महिमा और असंख्य लोगों के लिए अधिकतम भलाई उत्पन्न की। आइए देखें कि परमेश्वर ने क्या किया।

यूसुफ के साथ क्या हुआ?

अब्राहम के पुत्र याकूब के बारह पुत्र थे। यूसुफ, जो ग्यारहवाँ पुत्र था, याकूब का सबसे प्रिय था। जब यूसुफ एक युवा व्यक्ति था, तब परमेश्वर ने उससे महानता का वादा किया। यह प्रतिज्ञा, उसके पिता के विशेष प्रेम के साथ मिलकर, उसके भाइयों के मन में उसके प्रति घृणा उत्पन्न कर गई।

जब यूसुफ सत्रह वर्ष का था, तब उसके भाइयों ने उसे मार डालने की योजना बनाई, परन्तु बाद में अपना विचार बदल दिया और उसे दासत्व में बेच दिया। दास व्यापारियों ने यूसुफ को मिस्र ले जाकर बेच दिया। फिरौन—मिस्र के राजा—के एक अधिकारी, पोतीफ़र ने यूसुफ को खरीद लिया और उसे अपने घर की देखरेख का अधिकार दे दिया। वहाँ रहते समय, पोतीफ़र की पत्नी ने यूसुफ पर झूठा बलात्कार का आरोप लगाया, और उसे कारागार में डाल दिया गया।

कारागार में यूसुफ की भेंट दो अन्य बंदियों से हुई—एक पिलानेहारा और एक रसोइया—जो फिरौन के लिए काम करते थे। उन्हें इसलिए बंदी बनाया गया था क्योंकि उन्होंने अपने राजा को अप्रसन्न किया था। समय बीतने पर, उन दोनों ने ऐसे स्वप्न देखे जिन्हें वे समझ नहीं सके, परन्तु यूसुफ उन्हें उनका अर्थ समझा सका। यूसुफ की व्याख्या के अनुसार, रसोइए को फाँसी दी जाएगी और पिलानेहारे को उसके पद पर पुनः बहाल किया जाएगा। यूसुफ की भविष्यवाणियाँ पूरी हुईं। रसोइया मर गया और पिलानेहारा अपने पद पर फिर से नियुक्त कर दिया गया।

पिलानेहारा यूसुफ को दो वर्षों तक भूल गया, जब तक कि फिरौन ने ऐसे स्वप्न नहीं देखे जिनका अर्थ कोई नहीं बता सका। पिलानेहारे के कहने पर, फिरौन ने यूसुफ को राजदरबार में बुलवाया, जहाँ यूसुफ ने सही रूप से उन स्वप्नों का अर्थ यह बताया कि वे आने वाले अकाल की चेतावनी हैं। उन स्वप्नों ने सात वर्षों की बड़ी समृद्धि और उसके बाद सात वर्षों की भारी कमी की भविष्यवाणी की। यूसुफ की व्याख्या के उत्तर में, फिरौन ने उसे अकाल शुरू होने से पहले भोजन संग्रह करने और फिर कठिन समय में उसे वितरित करने का प्रभारी बना दिया। उस समय यूसुफ तीस वर्ष का था।

यूसुफ ने भोजन संग्रह और वितरण की योजनाओं को सफलतापूर्वक तैयार किया और लागू किया। जब मिस्र और उसके आसपास के राष्ट्र अकाल का सामना कर रहे थे, तब प्रभावित लोगों को खिलाने के लिए पर्याप्त भोजन उपलब्ध था। यूसुफ के अपने भाई भी उन्हीं लोगों में थे जो उससे सहायता माँगने आए। अंततः उसका अपने परिवार से पुनर्मिलन हुआ, जब उसके पिता, उसके भाई, उनकी पत्नियाँ और बच्चे मिस्र में रहने के लिए आ गए। यूसुफ की पूरी कहानी उत्पत्ति अध्याय 37 से 50 में लिखी गई है।

यह क्यों हुआ?

यूसुफ की पीड़ाएँ “क्यों” के प्रश्न को सामने लाती हैं। उसके साथ यह क्यों हुआ?

हम जानते हैं कि यूसुफ की परेशानियों का स्रोत परमेश्वर नहीं था। पहला कारण, यीशु—जो परमेश्वर है और हमें परमेश्वर को प्रकट करता है—उस ने कभी किसी के साथ वैसा व्यवहार नहीं किया जैसा यूसुफ के भाइयों ने उसके साथ किया। इसलिए, यूसुफ की परीक्षाएँ परमेश्वर का कार्य नहीं हो सकती थीं।

और, अंततः प्रभु ने उसे उसके कष्टों से छुड़ाया (प्रेरितों के काम अध्याय 7 आयत 9 से 10)। परमेश्वर लोगों को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से पीड़ा नहीं देता, फिर बाद में मुड़कर उन्हें छुड़ाने के लिए नहीं, क्योंकि ऐसा करना अपने ही विरुद्ध विभाजित घर के समान होता।

यूसुफ के अनुभव पर शैतान की छाप स्पष्ट दिखाई देती है। बाइबल कहती है कि शैतान हत्यारा और झूठा है, जो मनुष्यों से छीनने और उन्हें निगल जाने का प्रयास करता है (यूहन्ना अध्याय 8 आयत 44; यूहन्ना अध्याय 10 आयत 10 और 1 पतरस अध्याय 5 आयत 8)। ठीक यही यूसुफ के भाइयों ने उसके साथ किया। उन्होंने उसे मार डालने की योजना बनाई, फिर उसे दासत्व में बेच दिया और उसके पिता से जो हुआ उसके बारे में झूठ बोला। पोतीफर की पत्नी ने भी यूसुफ के बारे में झूठ बोला और परिणामस्वरूप उसके जीवन के कई वर्ष उससे छीन लिए।

क्या शैतान ने सीधे तौर पर यूसुफ की इस कठिन परीक्षा की योजना बनाई थी? बाइबल यह नहीं कहती कि ऐसा ही हुआ था, और वास्तव में इससे विशेष अंतर भी नहीं पड़ता। जैसा कि हमने अध्याय 1 में उल्लेख किया था, शैतान मनुष्यों के व्यवहार को प्रभावित करने के लिए उन पर कार्य करता है। शैतान को यूसुफ के भाइयों और रास्ते में आने वाले अन्य लोगों तक उनकी पतित प्रकृति और नवीनीकृत न हुए मनो के द्वारा पहुँच मिली।

शैतान से प्रभावित पतित लोगों द्वारा किए गए स्वतंत्र इच्छा के अनेक कार्यों ने यूसुफ की विपत्तियों को जन्म दिया। ये परेशानियाँ उस पर इसलिए आईं क्योंकि पाप से शापित पृथ्वी पर जीवन ऐसा ही है।

परमेश्वर क्या कर रहा था?

यूसुफ की कहानी से हम देख सकते हैं कि परमेश्वर ने मानवीय चुनावों के परिणामों को— यहाँ तक कि उन चुनावों को भी जिन्हें उसने न स्वीकृति दी और न ही व्यवस्थित किया— अपनी महिमा और महान भलाई के लिए किस प्रकार अधिकतम रूप से उपयोग किया। परन्तु इसमें समय लगा। परमेश्वर ने अल्पकालिक आशीष (यूसुफ की समस्याओं को उसी दिन समाप्त कर देना जिस दिन वे शुरू हुईं) उन को दीर्घकालिक और अनन्त परिणामों के लिए स्थगित कर दिया।

इन उदाहरणों पर विचार कीजिए:

- परमेश्वर यूसुफ को स्पष्ट रूप से चेतावनी दे सकता था कि उसके भाई क्या करने वाले हैं, परन्तु जहाँ तक हम जानते हैं, उसने ऐसा नहीं किया। वह जानकारी यूसुफ की समस्याओं का समाधान नहीं करती। उसके भाइयों के हृदयों में अब भी उसके प्रति घृणा और हत्या की भावना थी, जिससे भविष्य की परेशानी की संभावना बनी रहती।

यदि उस समय परमेश्वर हस्तक्षेप करता, तो यूसुफ मिस्र में पहुँचकर भोजन वितरण की व्यवस्था का प्रभारी न बनता, और सम्भव है कि वह तथा उसका परिवार अकाल से बच न पाते। यदि वे नष्ट हो जाते, तो मसीह के द्वारा पुत्रों और पुत्रियों के परिवार की परमेश्वर की योजना रुक जाती, क्योंकि यीशु यूसुफ के परिवार (अब्राहम की सन्तान) के माध्यम से संसार में आया।

- जब पोतीफर की पत्नी ने यूसुफ के विषय में झूठ बोला, तब परमेश्वर ने हस्तक्षेप नहीं किया, क्योंकि वह देख सकता था कि उसके चुनाव कहाँ ले जाएँगे। उसके झूठ के कारण यूसुफ कारागार में डाल दिया गया। परन्तु उसी कारागार में उसकी भेंट पिलानेहारे से हुई, जो यूसुफ को फिरौन तक पहुँचाने की कड़ी बना।

- अंततः पिलानेहारा कारागार से रिहा हो गया। परन्तु फिरौन से यूसुफ के बारे में बोलने की बात उसे याद आने में दो वर्ष बीत गए। यदि यह मामला फिरौन के सामने उसके विचित्र

स्वप्नों से पहले आ गया होता, तो सम्भव है कि यूसुफ कारागार से रिहा हो जाता, परन्तु उसे पदोन्नति देने का कोई कारण न होता। सम्भव है कि वह मिस्र में गुमनामी में खो जाता या कनान लौट जाता और शायद अकाल में मर जाता। किसी भी स्थिति में, उसे भोजन वितरण की व्यवस्था का प्रभारी नहीं बनाया जाता।

परमेश्वर ने यूसुफ के साथ किए गए बुरे कार्यों में से महान भलाई उत्पन्न की। अंततः यूसुफ ऐसी स्थिति में पहुँचा जहाँ वह अपने परिवार को भोजन उपलब्ध करा सका, और परिणामस्वरूप उस वंश को सुरक्षित रख सका जिसके माध्यम से एक दिन यीशु संसार में आने वाला था। यूसुफ की योजना ने अनेक हज़ारों लोगों को भूख से मरने से बचाया, और असंख्य लोगों ने एकमात्र सच्चे परमेश्वर के बारे में सुना क्योंकि यूसुफ ने अपनी विपत्तियों के बीच प्रभु को स्वीकार किया। उदाहरण के लिए:

- पोतीफ़र के घर में दासत्व के दौरान, पोतीफ़र, जो मिस्र के देवताओं का उपासक था, यह समझ गया कि सर्वशक्तिमान परमेश्वर यूसुफ के साथ है (उत्पत्ति अध्याय 39 आयत 3)।

- जब यूसुफ कारागार में था, तब उसने स्वीकार किया कि रसोइए और पिलानेहारे के स्वप्नों की सही व्याख्या देने वाला परमेश्वर है। परिणामस्वरूप, मिस्र के और भी बहुत-से मूर्तिपूजकों ने उस एकमात्र सर्वशक्तिमान परमेश्वर के बारे में सुना (उत्पत्ति अध्याय 40 आयत 8)।

- जब यूसुफ फिरौन के परेशान करने वाले स्वप्नों की व्याख्या करने में सक्षम हुआ, तब उसने फिर से उसका श्रेय प्रभु को दिया। राजा ने पहचान लिया कि परमेश्वर कार्य कर रहा है: “(यूसुफ) ऐसा व्यक्ति है जो स्पष्ट रूप से परमेश्वर के आत्मा से भरा हुआ है” (उत्पत्ति अध्याय 41 आयत 38 से 39)।

- अकाल के वर्षों में बहुत-से देश भोजन के लिए मिस्र आए। सम्भव है कि इन लोगों की बड़ी संख्या ने सर्वोच्च प्रभु के बारे में सुना हो, जब उन्हें बताया गया कि जब किसी और के पास भोजन नहीं था, तब मिस्र के पास इतना भोजन क्यों था (उत्पत्ति अध्याय 41 आयत 57)।

परमेश्वर ने यूसुफ को उसकी कठिन परीक्षा के दौरान कभी नहीं छोड़ा। इसके बजाय, उसने यूसुफ की रक्षा की और अत्यंत कठिन परिस्थितियों के बीच भी उसे उन्नति करने योग्य बनाया। इन उदाहरणों पर ध्यान दीजिए:

- जब यूसुफ दास के रूप में पोतीफर के घर पहुँचा, तो वह शीघ्र ही उन्नति करने लगा। पोतीफर ने यूसुफ को पूरे घर की ज़िम्मेदारी सौंप दी। “परन्तु प्रभु यूसुफ के साथ था, और वह [यद्यपि दास था] सफल और समृद्ध मनुष्य था... (वह) अपने स्वामी (पोतीफर) की दृष्टि में अनुग्रह पाया... और [उसके स्वामी] ने उसे अपने घर का प्रधान बना दिया और अपनी सारी संपत्ति उसकी (यूसुफ की) देखरेख में सौंप दी” (उत्पत्ति अध्याय 39 आयत 2 से 4)।

- बलात्कार के लिए सामान्य दंड मृत्यु था। यद्यपि यूसुफ पर इस अपराध का आरोप लगाया गया, फिर भी फिरौन ने उसे मृत्यु-दंड देने के बजाय राजनीतिक बंदियों के कारागार में भेजा।

- यूसुफ को कारागार में बेड़ियों में जकड़ दिया गया। परन्तु परमेश्वर ने उसे उन बंधनों से छुड़ाया और उसे बड़ी ज़िम्मेदारी की स्थिति में पहुँचा दिया—पूरे कारागार की देखरेख का भार उसके हाथ में आ गया। और जब फिरौन का पिलानेहारा और रसोइया वहाँ आए, तो यूसुफ स्वयं उनकी सेवा करता था।

- जब यूसुफ ने फिरौन के स्वप्नों की व्याख्या की, तब फिरौन ने उसे मिस्र का दूसरा सर्वोच्च अधिकारी बना दिया। फिरौन ने उससे कहा, “केवल मैं ही पद में तुझसे बड़ा रहूँगा” (उत्पत्ति अध्याय 41 आयत 40)।

यूसुफ की अपनी परीक्षाओं के विषय में दृष्टि।

फिरौन ने यूसुफ को एक पत्नी भी दी, और उसने मिस्र में परिवार बसाया। यूसुफ के बच्चों के नाम हमें इस बात की गहरी समझ देते हैं कि अपनी कठिनाइयों के दौरान परमेश्वर की सहायता और प्रबंध के विषय में यूसुफ क्या सोचता था।

“यूसुफ ने अपने बड़े पुत्र का नाम मनश्शे रखा, क्योंकि उसने कहा, ‘परमेश्वर ने मुझे मेरी सारी परेशानियों और मेरे पिता के परिवार को भुला दिया है।’ यूसुफ ने अपने दूसरे पुत्र का नाम एप्रैम रखा, क्योंकि उसने कहा, ‘परमेश्वर ने मेरी पीड़ा की भूमि में मुझे फलवन्त बनाया है।’” (उत्पत्ति अध्याय 41 आयत 51 से 52)।

हर बार जब यूसुफ अपने बच्चों के नाम लेता था, वह यह घोषणा करता था कि परमेश्वर ने उसकी कठिनाइयों और हानि की पीड़ादायक स्मृतियों को दूर कर दिया है और जो भूमि कभी उसके लिए पीड़ा की भूमि थी, उसी में उसे बहुतायत का जीवन दिया है। यूसुफ के पास अपनी परिस्थिति में इतनी शांति और विजय थी कि जब उसके भाई भोजन के लिए मिस्र आए, तो वह उनसे कह सका:

“(परमेश्वर) ने मुझे तुमसे पहले यहाँ भेजा ताकि तुम्हारे प्राण बचाए... ताकि तुम्हें और तुम्हारे परिवारों को जीवित रखे और तुम एक बड़ी जाति बनो” (उत्पत्ति अध्याय 45 आयत 5 से 7)।

जब यूसुफ ने कहा कि परमेश्वर ने उसे मिस्र भेजा, तो उसका अर्थ यह नहीं था कि परमेश्वर ने उसकी परेशानियाँ उत्पन्न कीं। बल्कि, वह यह व्यक्त कर रहा था कि परमेश्वर अपने ब्रह्मांड और मनुष्य की स्वतंत्र इच्छा पर कितना नियंत्रण रखता है। परमेश्वर ने इनमें से कुछ भी उत्पन्न नहीं किया, परन्तु उसने इन सबका उपयोग किया। मेरा अर्थ यह है कि परमेश्वर पहले से जानता था कि यूसुफ के भाई उसके साथ क्या करने वाले हैं, और उसने उनके चुनावों को अपनी योजना में शामिल कर लिया। जब यूसुफ के भाइयों ने उसे दासत्व में बेच दिया, तो उन्होंने उसके विरुद्ध बड़ी बुराई की। परन्तु परमेश्वर ने उनके उस दुष्ट चुनाव का उपयोग अंततः यूसुफ को मिस्र में अधिकार की स्थिति तक पहुँचाने के लिए किया। परिणामस्वरूप, अनगिनत प्राण बचाए गए और हज़ारों लोगों ने यहोवा, एकमात्र सच्चे परमेश्वर, के बारे में सुना। परमेश्वर का नियंत्रण तब भी ऐसा ही था और आज भी वैसा ही है।

जब यूसुफ ने अपने अनुभवों की ओर पीछे मुड़कर देखा, तो वह स्पष्ट रूप से समझ सका कि परमेश्वर इतना महान है कि वह उन दुष्ट कार्यों को भी, जो उसके द्वारा नहीं किए गए, अपने उद्देश्यों की पूर्ति में लगा सकता है। अंततः यूसुफ अपने भाइयों से यह कह सका:

“जहाँ तक तुम्हारा प्रश्न है, तुमने मेरे विरुद्ध बुराई की योजना बनाई थी, परन्तु परमेश्वर ने उसे भलाई में बदल दिया। उसने मुझे आज इस ऊँचे पद पर पहुँचाया ताकि मैं बहुत-से लोगों के प्राण बचा सकूँ” (उत्पत्ति अध्याय 50 आयत 20)।



यूसुफ के जीवन में परमेश्वर ने क्या किया? उसने पर्दे के पीछे कार्य किया और मनुष्यों के चुनावों को अपने उद्देश्यों की पूर्ति में लगा दिया। परमेश्वर का समय पूर्णतः सही था। उसने अल्पकालिक आशीष (तत्काल छुटकारा) को दीर्घकालिक और अनन्त परिणामों के लिए स्थगित किया। परमेश्वर ने यूसुफ को तब तक संभालकर निकाला जब तक उसे पूरी तरह बाहर नहीं ले आया, और अत्यंत कठोर परिस्थितियों के बीच भी यूसुफ को फलने-फूलने योग्य बनाया। प्रभु ने वास्तविक बुराई में से वास्तविक भलाई उत्पन्न की, अपने लिए अधिकतम महिमा लाई, और अपनी अनन्त उद्धार की योजना को पूरा करते हुए असंख्य पुरुषों और स्त्रियों के लिए अधिकतम भलाई उत्पन्न की।

यूसुफ की कहानी में “क्या” के प्रश्न का यही उत्तर है।



मूसा और इस्राएल की कहानी

मूसा और उन इब्रानी लोगों की कहानी, जिन्होंने मिस्र छोड़कर कनान में अपने देश की ओर यात्रा की, हमें यह और अधिक समझ देती है कि जीवन की परीक्षाओं में परमेश्वर किस प्रकार कार्य करता है। इस विवरण में हम देखते हैं कि परमेश्वर ने उनके लिए वैसी ही बातें कीं जैसी उसने यूसुफ के लिए की थीं।

कहानी आरम्भ होती है।

यूसुफ के समय में, इस्राएल की नवोदित जाति—कुल मिलाकर पचहत्तर लोग—अकाल के दौरान भोजन के लिए मिस्र गई थी। वे वहाँ बस गए और बहुत समृद्ध हुए। समय बीतने पर, यूसुफ और उसकी पीढ़ी के लोग मर गए, परन्तु उनके वंशजों के बहुत-से बच्चे और पोते-पोतियाँ हुए। “वास्तव में, वे इतनी तेजी से बढ़े कि शीघ्र ही पूरे देश में फैल गए” (निर्गमन अध्याय 1 आयत 7)।

मिस्रियों ने इस तेज वृद्धि पर भय के साथ प्रतिक्रिया की। जब एक नया राजा सत्ता में आया, जो यूसुफ या उसके कार्यों के विषय में कुछ नहीं जानता था, तो उसने निर्दयता से इब्रानी लोगों को दास बना लिया।

परमेश्वर के लोग दासत्व में इसलिए गिरे क्योंकि पाप से शापित पृथ्वी पर जीवन ऐसा ही है। पतित मनुष्यों का स्वभाव है कि वे अन्य मनुष्यों पर शासन करें। शैतान इसी प्रवृत्ति के माध्यम से कार्य करता है और मनुष्यों को एक-दूसरे को दास बनाने के लिए प्रभावित करता है। इस क्षतिग्रस्त संसार में, शैतान से प्रभावित पतित मनुष्यों के स्वतंत्र इच्छा के चुनाव विनाशकारी परिणाम उत्पन्न कर सकते हैं। इस्राएल के साथ यही हुआ।

कठोर जीवन परिस्थितियों के बावजूद इस्राएली बढ़ते रहे। इसलिए फिरौन ने इब्रानी दाइयों और अपने ही लोगों को आदेश दिया कि वे इस्राएल के नवजात लड़कों को मार डालें। “परन्तु जितना अधिक मिस्री उन पर अत्याचार करते गए, उतनी ही तेजी से इस्राएली बढ़ते गए” (निर्गमन अध्याय 1 आयत 12)। परमेश्वर अपने लोगों को अत्यंत चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों में भी उन्नति करने योग्य बना सकता है।

इसी अवधि में, मूसा का जन्म एक इब्रानी के घर हुआ। उन्होंने उसे तीन महीने तक छिपाकर रखा ताकि उसे मारे जाने से बचाया जा सके। जब उसके माता-पिता उसे और अधिक नहीं छिपा सके, तो उन्होंने परमेश्वर पर भरोसा किया और उसे नील नदी में एक छोटी जलरोधी टोकरी में रख दिया। फिरौन की बेटी ने मूसा को नदी के किनारे नरकटों के बीच पाया और उसे अपने पुत्र के रूप में गोद लेने का निर्णय किया। मूसा की बहन मरियम, जो दूर से उस टोकरी को देख रही थी, मिस्री राजकुमारी के पास गई और बच्चे को दूध पिलाने के लिए एक धाय ढूँढ़ने का प्रस्ताव दिया। राजकुमारी ने सहमति दे दी, और मरियम उस शिशु को उसकी माँ के पास घर ले गई। मूसा की माँ ने अपने पुत्र की देखभाल तब तक की जब तक उसका दूध न छूट गया। फिर उसने उसे फिरौन की बेटी को सौंप दिया।

इस कठिन और खतरनाक वातावरण के बीच परमेश्वर ने वास्तविक बुराई में से वास्तविक भलाई उत्पन्न की। प्रभु ने उसी शक्ति को, जो इब्रानी बालकों को नष्ट करने के लिए कार्य कर रही थी—मिस्र—उसी को वह साधन बना दिया जिसके द्वारा उसने मूसा के प्राण बचाए। जब फिरौन की बेटी ने मूसा को नील नदी से निकाला, तब वह मिस्र का संरक्षित राजकुमार बन गया। मूसा न केवल जीवित बच गया, बल्कि अपने प्रारंभिक वर्षों में उसे अपनी धर्मी माँ का प्रभाव भी मिला। फिर जब उसकी माँ ने मूसा को राजकुमारी को वापस सौंप दिया, तब एक राजपुत्र के रूप में उसे वह प्रशिक्षण मिला जो उसे कभी नहीं मिलता यदि वह इब्रानियों के बीच ईंटें बनाने वाले दास के रूप में बड़ा होता। “और वह वचन और कर्म दोनों में सामर्थ्य हो गया” (प्रेरितों के काम अध्याय 7 आयत 22)।

जब मूसा वयस्क हुआ, तो उसका मन इस्राएलियों की ओर आकर्षित हुआ। परन्तु चालीस वर्ष की आयु में, उसने एक मिस्री को मार डाला जिसने एक इब्रानी दास के साथ दुर्व्यवहार किया था। मूसा मिस्र से भाग गया और अरब देश की मिदयान की मरुभूमि में चालीस वर्ष बिताए। परमेश्वर ने मूसा से उस मिस्री की हत्या नहीं करवाई और न ही उसे मिस्र छोड़ने के लिए प्रेरित किया, परन्तु उसने मूसा के कार्यों का उपयोग किया और उन्हें अपनी समग्र योजना में सम्मिलित कर लिया।

परमेश्वर ने मूसा को इस्राएलियों को उनके देश वापस ले जाने के लिए चुना था। फिर भी, उस मिस्री को मार डालने के उसके उतावले कार्य ने दिखा दिया कि वह अभी बड़ी संख्या में कठिन लोगों को एक खतरनाक यात्रा पर ले जाने के लिए तैयार नहीं था। मूसा को उन चरित्र गुणों को विकसित करने के लिए समय चाहिए था जो उसे एक महान अगुवा बनाते। चरित्र निर्माण का वह समय मिदयान में बीता। और मिदयान ही वह स्थान था जहाँ मूसा—जो एक महल में पला-बढ़ा था—उस ने मरुभूमि में रहना सीखा। उसे ठीक वही प्रशिक्षण मिला जिसकी उसे परमेश्वर की उस योजना को पूरा करने के लिए आवश्यकता थी, जिसके अनुसार उसे अपने लोगों को कनान की ओर जाते हुए मरुभूमि के जंगल से होकर ले जाना था।

सबसे उत्तम मार्ग।

जब मूसा अपनी नियति को पूरा करने के लिए मिस्र लौटा, तब उसकी आयु अस्सी वर्ष थी। वह फिरौन के पास गया और इब्रानियों को दासत्व से मुक्त करने की माँग की। फिरौन ने इनकार कर दिया। नौ महीनों की अवधि में मिस्रियों पर एक के बाद एक विपत्तियाँ आईं, और तब फिरौन इस्राएलियों को मुक्त करने और उन्हें मिस्र छोड़ने देने के लिए सहमत हुआ। उनकी कनान वापसी की यात्रा आरम्भ हुई।

परमेश्वर इस्राएल को घर वापस ले जाने के लिए दो मार्गों में से किसी एक मार्ग से ले जा सकता था—फिलिस्तिनियों का मार्ग या सिनै प्रायद्वीप के जंगल का मार्ग (निर्गमन अध्याय 13 आयत 17 से 18)। पहला मार्ग फिलिस्तिनियों से भरा हुआ था, जो मूर्तिपूजक और युद्धप्रिय

लोग थे। दूसरा मार्ग पहाड़ी और सूखा था, जहाँ पर्वतों की ऊँचाई 7,400 फीट तक पहुँचती थी और वर्ष भर में 8 इंच से भी कम वर्षा होती थी।

आदम के पहले पाप के प्रभावों के कारण दोनों में से किसी भी मार्ग की यात्रा कठिन थी। उसकी अवज्ञा ने मनुष्य में पापमय स्वभाव उत्पन्न किया, जिसके परिणामस्वरूप ऐसे आक्रामक गोत्र अस्तित्व में आए जो अन्य मनुष्यों को जीतने के लिए तत्पर रहते थे—जैसे कि फिलिस्तिनियों के मार्ग पर रहने वाले लोग। जंगल का मार्ग मरुभूमि से होकर जाता था। मरुभूमि जैसे स्थान और उनके द्वारा प्रस्तुत कठिनाइयाँ उस मृत्यु के शाप के कारण विकसित हुईं जो आदम के पाप करने पर पृथ्वी पर आया।

परमेश्वर ने इन दोनों मार्गों की चुनौतियों को उत्पन्न नहीं किया, परन्तु वह जानता था कि कौन-सा मार्ग अधिकतम परिणाम उत्पन्न करेगा। उसने इस्राएल के लिए सर्वोत्तम मार्ग चुना—सिनै के जंगल से होकर जाने वाला मार्ग—और उसके पास एक योजना थी कि इस मार्ग का उपयोग करके इस्राएल के लिए महान भलाई और अपने लिए बहुत महिमा उत्पन्न करे।

मिस्र की सेना अत्यंत शक्तिशाली थी और मिस्र से कनान की दूरी भी बहुत अधिक नहीं थी। एक बार जब इस्राएली कनान में बस जाते, तो मिस्र की सेना उनके लिए निरंतर खतरा बनी रहती। परमेश्वर ने इस खतरे को समाप्त करने का एक मार्ग देखा। प्रभु जानता था कि फिरौन इब्रानियों को दासत्व से मुक्त करने के अपने निर्णय को बदल देगा। फिरौन ने अपनी सेना अपने नवनिर्मुक्त दासों के पीछे भेज दी, क्योंकि उसे लगा कि उसके पूर्व बंदी लाल समुद्र के किनारे जंगल में फँस गए हैं। जब मिस्री इब्रानियों का पीछा कर रहे थे, तब परमेश्वर ने समुद्र के जल को दो भागों में बाँट दिया और इस्राएल को सूखी भूमि पर होकर पार जाने दिया। जब मिस्री योद्धाओं ने उनका पीछा करने का प्रयास किया, तो जल फिर से मिल गया और वे नष्ट हो गए।

इस घटना में से महान भलाई उत्पन्न हुई। परमेश्वर ने न केवल इस्राएल के लिए एक वास्तविक खतरे को समाप्त किया, बल्कि लाल समुद्र के विभाजन का इब्रानियों पर गहरा प्रभाव पड़ा।

“जब इस्राएल के लोगों ने वह महान सामर्थ्य देखी जो प्रभु ने मिस्रियों के विरुद्ध प्रकट की थी, तब वे प्रभु का भय मानने लगे और उन्होंने उस पर तथा उसके सेवक मूसा पर विश्वास किया” (निर्गमन अध्याय 14 आयत 31)।

मरुभूमि में प्रबंध।

सिनै के जंगल का मार्ग भयावह और खतरनाक था। मरुभूमि की यात्रा के दौरान इस्राएल ने अनेक कठिनाइयों का सामना किया, जिनमें भोजन और पानी की कमी, साँप, बिच्छू, गर्मी, धूल और थकावट शामिल थीं। परन्तु परमेश्वर ने अपने लोगों की देखभाल उन चुनौतियों के बीच भी की जो उनके वातावरण ने प्रस्तुत कीं। उसने उन्हें मरुभूमि से तब तक सुरक्षित निकाला जब तक पूरी तरह बाहर न ले आया।

“(परमेश्वर) अपने लोगों को मिस्र से सुरक्षित निकाल लाया, वे चाँदी और सोने से लदे हुए थे; उनमें कोई भी रोगी या निर्बल नहीं था। ... प्रभु ने उनके ऊपर छाया करने के लिए बादल फैलाया और अंधकार में प्रकाश देने के लिए महान अग्नि दी। उन्होंने मांस माँगा, और उसने उन्हें बटेर भेजी; उसने उन्हें मन्ना दिया—स्वर्ग की रोटी। उसने चट्टान को खोल दिया, और जल फूट निकला, जो सूखी और बंजर भूमि में नदी के समान बहने लगा” (भजन संहिता अध्याय 105 आयत 37 से 41)।

“तुम्हारे परमेश्वर यहोवा ने इस जंगल में बार-बार तुम्हारी देखभाल की, जैसे पिता अपने बच्चे की देखभाल करता है” (व्यवस्थाविवरण अध्याय 1 आयत 31)।

“इन पूरे चालीस वर्षों में तुम्हारे वस्त्र नहीं घिसे, और तुम्हारे पाँवों में न छाले पड़े और न सूजन आई” (व्यवस्थाविवरण अध्याय 8 आयत 4)।

परमेश्वर का सिद्ध समय।

मिस्र से उनके देश तक की यात्रा ग्यारह दिनों की थी। फिर भी, इस्राएल को कनान पहुँचने में दो वर्ष लगे (व्यवस्थाविवरण अध्याय 1 आयत 2; गिनती अध्याय 10 आयत 11 से 13)। दो सप्ताह की यात्रा के लिए दो वर्ष बहुत लंबे लग सकते हैं, परन्तु परमेश्वर का समय सिद्ध होता है। इस्राएल की प्रतीक्षा की अवधि के दौरान परमेश्वर कार्य कर रहा था। बहुत भलाई हुई।

परमेश्वर ने सीनै पर्वत पर मूसा से भेंट की और उसे व्यवस्था दी जिसका पालन इस्राएल को उस देश में पहुँचने के बाद करना था जिसे परमेश्वर ने उन्हें देने का वादा किया था। मूसा को तम्बू बनाने और बलिदान प्रणाली को लागू करने के निर्देश भी मिले, जो कनान में बसने के बाद उनके आत्मिक जीवन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होने वाले थे।

इन दो वर्षों की देरी ने इस बात के फैलने के लिए समय दिया कि इब्रानियों के परमेश्वर ने मिस्र की सेना को पराजित कर दिया है। जब तक इस्राएली अपने देश पहुँचे, वहाँ रहने वाले गोत्र उनसे भयभीत हो चुके थे। इससे इस्राएल को एक बड़ा रणनीतिक लाभ मिला।

जब इब्रानी अपने पैतृक देश में प्रवेश किए, तो यरीहो पहला नगर था जिसका उन्होंने सामना किया। नगर पर आक्रमण से पहले, दो भेदियों को यरीहो की दीवारों के भीतर जानकारी एकत्र करने के लिए भेजा गया। जब यरीहो के राजा को उनके वहाँ होने का पता चला, तो राहाब नामक एक वेश्या ने उन लोगों को छिपा दिया और भाग निकलने में सहायता की। उसने उन्हें बताया कि वह उनकी सहायता करने के लिए क्यों तैयार थी।

“हम सब तुमसे डरते हैं। हर कोई भय से काँप रहा है। क्योंकि हमने सुना है कि जब तुम मिस्र से निकले, तब प्रभु ने तुम्हारे लिए लाल समुद्र में सूखा मार्ग बना दिया था। ... इसमें आश्चर्य नहीं कि हमारे हृदय भय से पिघल गए हैं! ऐसी बातें सुनकर किसी में तुमसे लड़ने का साहस नहीं रहा। क्योंकि तुम्हारा परमेश्वर यहोवा ऊपर आकाश और नीचे पृथ्वी का सर्वोच्च परमेश्वर है” (यहोशू अध्याय 2 आयत 9 से 11)।

इस्राएल की देरी ने न केवल स्थानीय निवासियों के बीच भय और आतंक के विकसित होने के लिए समय दिया, बल्कि उसने अनन्त परिणाम भी उत्पन्न किए। राहाब, जो एक मूर्तिपूजक अन्यजाति स्त्री थी, इस निष्कर्ष पर पहुँची कि इब्रानियों का परमेश्वर ही सच्चा

परमेश्वर है। उसने उसे सर्वशक्तिमान परमेश्वर के रूप में पहचाना, और परिणामस्वरूप वह भेदियों की सहायता करने के लिए तैयार हुई। राहाब आज स्वर्ग में है क्योंकि इस्राएल का उस देश में पहुँचना दो वर्षों के लिए स्थगित हुआ। राहाब का उद्धार निश्चित रूप से उस प्रतीक्षा के योग्य था। कनान में और कितने लोग राहाब की ही तरह इस निष्कर्ष पर पहुँचे होंगे और अपने मूर्तियों को छोड़कर एकमात्र सच्चे परमेश्वर की सेवा करने लगे होंगे? इसका उत्तर केवल अनन्तकाल ही बताएगा।

परमेश्वर जीवन की चुनौतियों का उपयोग करता है।

क्योंकि परमेश्वर सार्वभौम है, अर्थात् सर्वशक्तिमान है, इसलिए वह उन परिस्थितियों का भी उपयोग कर सकता है जो उसकी बनाई हुई नहीं हैं, और उन्हें अपने लोगों की भलाई के लिए कार्यरत कर सकता है। कनान की ओर इस्राएल की यात्रा का विवरण हमें दिखाता है कि परमेश्वर यह कैसे करता है। इन तीन बिंदुओं पर विचार कीजिए।

परीक्षाओं में विश्वास दृढ़ हो सकता है।

जब इस्राएल लाल समुद्र पार कर चुका, तो वे तीन दिन तक मरुभूमि में चलते रहे और उन्हें पानी नहीं मिला। अंततः वे मारा नामक स्थान पर पहुँचे, परन्तु वहाँ का पानी पीने योग्य नहीं था। मूसा ने सहायता के लिए प्रभु की ओर रुख किया, और परमेश्वर ने उसे निर्देश दिया कि वह एक पेड़ की डाली उस कड़वे जल में डाल दे। उसने आज्ञा मानी और वह पानी पीने योग्य हो गया (निर्गमन अध्याय 15 आयत 22 से 26)।

परमेश्वर ने इस परिस्थिति को उत्पन्न नहीं किया। स्पष्ट रूप से परमेश्वर की इच्छा थी कि इस्राएल के पास पीने योग्य पानी हो, क्योंकि जब मूसा ने उसके निर्देशों का पालन किया, तब उसने पानी को शुद्ध कर दिया। मारा का पानी पीने योग्य क्यों नहीं था? यह केवल एक और उदाहरण है कि कैसे आदम के पाप ने ऐसा शाप लाया जिसने पृथ्वी के जीवन को भ्रष्ट कर दिया।

परमेश्वर अपने लोगों के वहाँ पहुँचने से पहले ही उस पानी को मीठा बना सकता था, परन्तु उसने ऐसा नहीं किया क्योंकि उसने उस परिस्थिति को इस्राएल के लाभ के लिए उपयोग करने का एक मार्ग देखा। आगे उस देश में इब्रानियों के सामने गढ़वाले नगर और शक्तिशाली शत्रु खड़े थे। अपने देश में प्रवेश करने और उस पर अधिकार करने के लिए उन्हें परखे हुए और सिद्ध विश्वास की आवश्यकता थी।

मारा के कड़वे पानी ने इब्रानियों को अपने विश्वास का प्रयोग करने और उसे मजबूत करने का अवसर दिया। उनके पास यह क्षमता विकसित करने का अवसर था कि वे दृष्टि से नहीं, विश्वास से चलें और पूरे भरोसे के साथ घोषणा करें: “हमें पानी चाहिए और हमें नहीं पता कि वह कैसे मिलेगा। परन्तु हम चिंतित नहीं हैं। परमेश्वर प्रबंध करेगा!”

परीक्षाओं में धैर्य मजबूत हो सकता है।

पाप से शापित पृथ्वी पर जीवन की प्रकृति के कारण, हमें जीवन की परेशानियों से हमेशा तुरंत छुटकारा नहीं मिलता। इसलिए, हमें विजय का अनुभव होने तक स्थिर बने रहने में सक्षम होना चाहिए। यही धैर्य का अर्थ है—परिस्थिति कैसी भी दिखाई दे, दृढ़ बने रहना।

कुछ लोग गलत रूप से मानते हैं कि परेशानियाँ हमें धैर्यवान बनाती हैं। परन्तु परीक्षाएँ सहन करने की क्षमता उत्पन्न नहीं करतीं, ठीक वैसे ही जैसे केवल व्यायाम मांसपेशियाँ पैदा नहीं करता। बल्कि, जीवन की चुनौतियाँ हमें परमेश्वर की उस सामर्थ्य के द्वारा, जो हमारे भीतर है, अपनी सहन करने की क्षमता का उपयोग करने का अवसर देती हैं, और परिणामस्वरूप हमारा धैर्य या सहनशीलता अधिक मजबूत होती है। यह उन तरीकों में से एक है जिनसे परमेश्वर इस जीवन की कठिनाइयों का उपयोग करता है।

“यह निश्चित जानो और समझो कि तुम्हारे विश्वास की परीक्षा और परख धीरज, स्थिरता और धैर्य को प्रकट करती है” (याकूब अध्याय 1 आयत 3)।

जब तुम परेशानी के सामने विश्वास और धैर्य प्रकट करते हो और परमेश्वर के वचन पर दृढ़तापूर्वक खड़े रहते हो, तब परमेश्वर की सामर्थ्य तुम्हें तब तक स्थिर बने रहने के लिए मजबूत करती है जब तक तुम उसके प्रबंध और छुटकारे का अनुभव नहीं कर लेते। एक क्षेत्र में सफलतापूर्वक दृढ़ बने रहना तुम्हें यह विश्वास देता है कि परमेश्वर की सहायता से तुम जीवन की अगली चुनौती को भी सह सकते हो।

तुम नहीं जानते कि इस जीवन की यात्रा में आगे क्या आने वाला है। तुम्हारी वर्तमान परिस्थिति में विश्वास और धैर्य के साथ चलने का जो अभ्यास हो रहा है, वही शायद अगली बड़ी कठिनाई पर विजय पाने के लिए ठीक वही चीज़ हो जिसकी तुम्हें आवश्यकता होगी। इब्रानी लोगों के साथ यही हुआ।

परीक्षाओं में कमियाँ उजागर हो सकती हैं।

इस्राएल ने मारा में अपने विश्वास और धैर्य का प्रयोग करने का अवसर खो दिया। इसके बजाय, उन्होंने पीने योग्य पानी की कमी के बारे में शिकायत की। “तब लोगों ने मूसा के विरुद्ध कुड़कुड़ाकर कहा, ‘हम क्या पिँएँ?’” (निर्गमन अध्याय 15 आयत 24)।

परीक्षाएँ अक्सर हमारे चरित्र की कमियों को उजागर कर देती हैं, ठीक वैसे ही जैसे मारा के कड़वे जल ने इस्राएल की कमियों को उजागर किया। जब कमियाँ उजागर हो जाती हैं, तब उनसे निपटा जा सकता है। यह एक और तरीका है जिससे परमेश्वर उन कठिनाइयों का उपयोग करता है जिन्हें उसने स्वयं उत्पन्न नहीं किया। मारा की घटना उसके लोगों के लिए अपनी कुड़कुड़ाहट को पहचानने और उससे निपटने का उत्तम अवसर थी। दुख की बात है कि इस्राएल ने अपने पाप को न तो स्वीकार किया और न ही उससे निपटा। वे कनान तक पूरे रास्ते शिकायत करते रहे।

शिकायत करना एक गंभीर दोष है क्योंकि यह अविश्वास की आवाज़ है। शिकायत केवल उसी बात को कहती है जो वह देखती और महसूस करती है। वह परमेश्वर की पिछली सहायता, वर्तमान प्रबंध और भविष्य की प्रतिज्ञाओं को ध्यान में नहीं रखती। इस्राएल की निरंतर कुड़कुड़ाहट ने उनके विश्वास को उस बात में मजबूत किया जो उनकी आँखें उन्हें बताती थीं, न कि उस बात में जो परमेश्वर ने कही थी। जब तक इस्राएल कनान पहुँचा, तब तक उनमें

परमेश्वर के वचन को कम महत्व देने और अपनी परिस्थिति का मूल्यांकन केवल उसी आधार पर करने की आदत विकसित हो चुकी थी जो वे देख सकते थे। अविश्वास की इस आदत ने उनसे प्रतिज्ञा का देश छीन लिया।

जब इस्राएली कनान की सीमा पर पहुँचे, तब मूसा ने उस देश का निरीक्षण करने के लिए बारह भेदियों को भेजा। उनमें से दो को छोड़कर सभी एक भयावह रिपोर्ट लेकर लौटे कि वहाँ विशाल दीवारें और दैत्याकार योद्धा हैं।

परिणामस्वरूप, इस्राएल की पूरी जाति ने सीमा पार करने से इनकार कर दिया, यद्यपि परमेश्वर ने उन्हें उनके शत्रुओं पर विजय का वादा किया था। उन्होंने उस देश को खो दिया जिसे परमेश्वर चाहता था कि वे प्राप्त करें।



शायद तुम यह सोच रहे हो कि हम उन लोगों की चर्चा क्यों कर रहे हैं जिन्होंने अपने जीवन में परमेश्वर की इच्छा को पूरा होते नहीं देखा। वास्तविकता यह है कि हम उनकी गलतियों से सीख सकते हैं। परमेश्वर ने इस्राएल की यात्रा का विवरण इस उद्देश्य से भी लिखवाया कि हम वही गलतियाँ न दोहराएँ।

“ये बातें उनके साथ उदाहरण के रूप में हुईं और हमारे लिए चेतावनी के रूप में लिखी गईं, जिन पर युगों की परिपूर्णता आ पहुँची है” (1 कुरिन्थियों अध्याय 10 आयत 11)।

अगले भाग में, हम चर्चा करेंगे कि हम इस्राएल की असफलताओं से कैसे बच सकते हैं और कठिनाइयों के प्रति ऐसी प्रतिक्रिया कैसे दे सकते हैं जो इस पाप से शापित पृथ्वी में परमेश्वर के कार्य करते समय उसकी सहायता के लिए द्वार खोल दे।

भाग दो



हमें क्या करना चाहिए और क्यों?



उचित प्रतिक्रिया

हम परमेश्वर के संबंध में “क्यों” और “क्या” के प्रश्नों का सफलतापूर्वक उत्तर दे चुके हैं। अब हमें इन प्रश्नों को अपने संबंध में समझना है। पाप से क्षतिग्रस्त इस संसार की चुनौतियों के प्रकाश में, हमें क्या करना चाहिए और क्यों?

जैसा कि हमने पिछले भाग में चर्चा की, परमेश्वर चाहता है कि जब वह अनन्तकाल के लिए अपने परिवार को एकत्र कर रहा है, तब वह अपने लिए अधिकतम महिमा और जितने अधिक लोगों के लिए संभव हो उतनी अधिक भलाई उत्पन्न करे। हम सीख सकते हैं कि जीवन की कठिनाइयों का सामना परमेश्वर के साथ सहयोग में कैसे करें, जब वह इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए कार्य कर रहा है।

आनन्द के साथ प्रतिक्रिया करो।

बाइबल स्पष्ट रूप से निर्देश देती है कि विपत्ति का सामना करते समय हमें क्या करना चाहिए। याकूब अध्याय 1 आयत 2 कहती है, “हे मेरे भाइयों, जब तुम विभिन्न प्रकार की परीक्षाओं में पड़ो या घिर जाओ, तो उसे पूर्ण आनन्द की बात समझो।”

जब जीवन की परीक्षाएँ हमारे सामने आती हैं, तब परमेश्वर का वचन हमें निर्देश देता है कि उन्हें आनन्दित होने के अवसर के रूप में देखें। आनन्दित होने का अर्थ है परमेश्वर की स्तुति करना।

किसी की स्तुति करने का अर्थ है उसके गुणों और कार्यों की घोषणा करना। मैंने कई वर्षों तक हाई स्कूल में इतिहास पढ़ाया। समय-समय पर कोई विद्यार्थी ऐसा चरित्र या शैक्षणिक उपलब्धि दिखाता था जो मेरी प्रशंसा के योग्य होती थी। मेरी प्रशंसा का मेरे भावनात्मक अनुभव से कोई संबंध नहीं था—न इस बात से कि मेरा मूड अच्छा है या बुरा, और न ही इस बात से कि मेरा जीवन अच्छा चल रहा है या नहीं। मैंने उस विद्यार्थी की सराहना इसलिए की क्योंकि वह उचित था। उसी प्रकार, प्रभु की स्तुति करना हमेशा उचित है—वह जो है और जो करता है, उसके कारण।

परमेश्वर की स्तुति जीवन की कठिनाइयों के प्रति केवल एक भावनात्मक प्रतिक्रिया नहीं है। ध्यान दीजिए कि ऊपर उद्धृत पद यह नहीं कहता कि हमें आनंद *महसूस* करना है। मनुष्य के लिए यह स्वाभाविक रूप से संभव नहीं कि किसी बुरी परिस्थिति का सामना करके अच्छा महसूस करे। परन्तु तुम आनंदित हो सकते हो, भले ही तुम्हें आनंद महसूस न हो। अपने जीवन की अनेक विपत्तियों और परीक्षाओं के संदर्भ में प्रेरित पौलुस ने कहा कि वह “दुखी होते हुए भी सदा आनन्दित” है (2 कुरिन्थियों अध्याय 6 आयत 10)।

जब लोगों से कहा जाता है कि वे क्लेश के सामने आनन्द मनाएँ, तो कभी-कभी वे विरोध करते हैं। उन्हें लगता है कि ऐसी प्रतिक्रिया अस्वाभाविक या यहाँ तक कि मूर्खतापूर्ण है। परन्तु आनन्दित होना अवश्य ही सही बात है, क्योंकि सर्वशक्तिमान परमेश्वर स्वयं हमें स्तुति के साथ प्रतिक्रिया करने का निर्देश देता है। यदि हम स्तुति के उद्देश्य और सामर्थ्य को समझें, तो यह केवल आज्ञाकारिता का कार्य ही नहीं, बल्कि पूरी तरह उचित भी है।

स्तुति मार्ग तैयार करती है।

परमेश्वर के आत्मा ने भजनकार दाऊद को ये रोचक शब्द लिखने के लिए प्रेरित किया: “बालकों और दूध पीते बच्चों के मुँह से तूने अपने विरोधियों के कारण सामर्थ्य ठहराई है, ताकि शत्रु और बदला लेने वाले को शांत कर दे” (भजन संहिता अध्याय 8 आयत 2)।

इस पद के अनुसार, ऐसी एक सामर्थ्य है जो विरोधी को रोक सकती है। यहाँ तक कि छोटे बच्चे और दूध पीते शिशु भी इस सामर्थ्य को प्रकट कर सकते हैं।

यीशु ने इस सामर्थ्य को परमेश्वर की स्तुति के रूप में पहचाना। अपने क्रूस पर चढ़ाए जाने से कुछ ही दिन पहले, जब वह यरूशलेम के मन्दिर में था, उसने बहुत-से अंधों और लंगड़ों को चंगा किया। कुछ बच्चों ने इन चंगाइयों को देखा और पुकारने लगे, “दाऊद के पुत्र को होशाना!” (मती अध्याय 21 आयत 9)। “होशाना” का अर्थ है, “हे प्रभु, बचा।” यह आराधना और स्तुति की एक पुकार थी। उस दिन ये बच्चे यीशु के द्वारा प्रकट हुए परमेश्वर के अद्भुत कार्यों के लिए उसकी स्तुति कर रहे थे।

महायाजक और मूसा की व्यवस्था के शिक्षक क्रोधित हो गए और उन्होंने यीशु को चुनौती दी, “क्या तू सुनता है कि ये बच्चे क्या कह रहे हैं?” (मती अध्याय 21 आयत 16)। उसने उन्हें दाऊद के शब्द उद्धृत करके उत्तर दिया: “क्या तुमने कभी नहीं पढ़ा, ‘बालकों और दूध पीते बच्चों के मुँह से तूने स्तुति सिद्ध की है’” (मती अध्याय 21 आयत 16)।

ध्यान दीजिए कि यीशु ने दाऊद के भजन में प्रयुक्त “सामर्थ्य” शब्द को “स्तुति” से बदल दिया। अपने विरोधियों को दिए इस उत्तर के द्वारा यीशु ने स्पष्ट कर दिया कि परमेश्वर की स्तुति ही वह सामर्थ्य है जो शत्रु को रोकती है और बदला लेने वाले को शांत करती है।

एक अन्य भजनकार ने लिखा, “जो कोई स्तुति का बलिदान चढ़ाता है, वह मेरी महिमा करता है” (भजन संहिता अध्याय 50 आयत 23), “और वह मार्ग तैयार करता है ताकि मैं उसे परमेश्वर का उद्धार दिखाऊँ” (भजन संहिता अध्याय 50 आयत 23)।

जब तुम विपत्ति के सामने परमेश्वर को स्वीकार करते और उसकी स्तुति करते हो—उसके विषय में बोलते हुए कि वह कौन है, उसने क्या किया है, क्या कर रहा है, और क्या करेगा—तब तुम परमेश्वर की महिमा करते हो और उसके लिए तुम्हारी परिस्थिति में अपनी सामर्थ्य प्रकट करने का मार्ग खोलते हो।

स्तुति प्रभु की महिमा करती है क्योंकि वह उसका आदर करती है। स्तुति परमेश्वर की सामर्थ्य के लिए द्वार खोलती है क्योंकि जब तुम उसकी सहायता और प्रबंध के लिए उसे देखने से पहले ही स्वीकार करते और धन्यवाद देते हो, तब तुम विश्वास प्रकट कर रहे होते हो। और परमेश्वर हमारे जीवनों में अपने अनुग्रह के द्वारा हमारे विश्वास के माध्यम से कार्य करता है।

पवित्रशास्त्र ऐसे कई उदाहरण दर्ज करता है जहाँ लोगों ने किसी भी दिखाई देने वाले कारण से पहले ही परमेश्वर की स्तुति की और अद्भुत परिणामों का अनुभव किया। आइए इनमें से दो घटनाओं पर विचार करें—एक प्रेरित पौलुस से संबंधित और दूसरी राजा यहोशापात से।

पौलुस और सीलास: स्तुति के द्वारा छुटकारा।

पौलुस और उसका सहकर्मी सीलास मकिदुनिया के नगर फिलिप्पी में मसीह में विश्वास के द्वारा उद्धार के सुसमाचार का प्रचार कर रहे थे। जब उनका सामना एक ऐसी दासी लड़की से हुआ जो दुष्टात्मा से ग्रस्त थी, तब पौलुस ने उस दुष्टात्मा को निकल जाने की आज्ञा देकर उसे आजाद कर दिया। उस लड़की के स्वामी क्रोधित हो गए क्योंकि वे उसकी दुष्टात्मा से प्रेरित भविष्यवाणी करने की क्षमता से धन कमाते थे। उन लोगों ने नगर के अधिकारियों से शिकायत की, जिन्होंने पौलुस और सीलास को गिरफ्तार कर लिया, उन्हें बुरी तरह पीटा, और फिलिप्पी के कारागार की अंधेरी कोठरी में बेड़ियों में डाल दिया। बाइबल कहती है: “आधी रात के समय पौलुस और सीलास प्रार्थना कर रहे थे और परमेश्वर के भजन गा रहे थे; और कैदी उन्हें सुन रहे थे” (प्रेरितों के काम अध्याय 16 आयत 25)।

अचानक एक बड़ा भूकम्प आया। कारागार के द्वार खुल गए और सबकी बेड़ियाँ खुल गईं। इस घटना ने कारागार के रखवाले को इतना प्रभावित किया कि उसने पौलुस और सीलास से विनती की कि वे उसे बताएं कि उसे अपने पापों से उद्धार पाने के लिए क्या करना चाहिए। पौलुस ने ऐसा किया, और वह व्यक्ति, उसका परिवार, और उसका पूरा घराना यीशु को उद्धारकर्ता और प्रभु के रूप में स्वीकार कर लिया। परम्परा बताती है कि यही जेलर बाद में फिलिप्पी में स्थापित कलीसिया का पास्टर बना।

ध्यान दीजिए कि यहाँ क्या हुआ। पौलुस और सीलास प्रचार कर रहे थे—प्रभु का कार्य कर रहे थे—जब उन्होंने एक लड़की को शैतान की बन्धुआई से स्वतंत्र किया। इस धर्मी कार्य के बदले उन्हें कठोर मार और कारावास मिला। फिर भी, उन्होंने परमेश्वर की स्तुति करके आनन्दित होने का चुनाव किया। क्यों? क्या इसलिए कि उनका मन था? इसकी संभावना बहुत कम है। उन्होंने परमेश्वर की स्तुति इसलिए की क्योंकि वे पवित्रशास्त्र से जानते थे कि प्रभु की स्तुति करना हमेशा उचित है।

“मैं हर समय प्रभु को धन्य कहूँगा; उसकी स्तुति निरन्तर मेरे मुँह में रहेगी” (भजन संहिता अध्याय 34 आयत 1)।

“काश लोग प्रभु की भलाई के लिए, और मनुष्यों की सन्तानों के प्रति उसके अद्भुत कार्यों के लिए उसकी स्तुति करें” (भजन संहिता अध्याय 107 आयत 15)।

“सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक प्रभु के नाम की स्तुति की जानी चाहिए” (भजन संहिता अध्याय 113 आयत 3)।

“आधी रात को मैं तेरे धर्मी न्यायों के कारण तेरा धन्यवाद करने के लिए उठूँगा” (भजन संहिता अध्याय 119 आयत 62)।

उनकी स्तुति का परिणाम क्या हुआ? परमेश्वर को आदर मिला और पौलुस तथा सीलास ने उसके लिए ऐसा मार्ग तैयार किया जिसमें वह अपना उद्धार उन्हें दिखा सके। वास्तविक बुराई—अन्यायपूर्ण कारावास—वास्तविक भलाई में बदल गई। प्रेरित और उसका सहकर्मी जेल से मुक्त हुए, और कारागार का रखवाला एक कलीसिया का अगुवा बन गया।

यहोशापात और यहूदा: स्तुति के द्वारा विजय।

तीन शत्रु सेनाएँ यहूदा के राजा यहोशापात के विरुद्ध आ गईं, जो इस्राएल के दक्षिणी राज्य का राजा था। यहोशापात और उसके लोग संख्या में बहुत कम थे। उन्हें समझ नहीं आ रहा

था कि क्या करें, इसलिए उन्होंने परमेश्वर की सहायता माँगी। परमेश्वर ने अपने भविष्यद्वक्ता के द्वारा उनसे बात की और सहायता का वादा किया। अगले दिन, जब वे युद्ध की तैयारी कर रहे थे, यहोशापात ने अपने लोगों को उत्साहित किया कि वे परमेश्वर के कहे हुए पर विश्वास करें और दृढ़ बने रहें।

“लोगों के अगुओं से विचार-विमर्श करने के बाद, राजा ने गायक नियुक्त किए कि वे सेना के आगे-आगे चलें, प्रभु के लिए गाएँ और उसकी पवित्र महिमा के लिए उसकी स्तुति करें। वे यह गा रहे थे: ‘प्रभु का धन्यवाद करो; क्योंकि उसकी अटल प्रेममयी करुणा सदा बनी रहती है’” (2 इतिहास अध्याय 20 आयत 21)।

क्या इन लोगों का मन परमेश्वर की स्तुति करने का था? संभवतः नहीं। जो कुछ वे अपनी आँखों से देख सकते थे, उसके आधार पर वे तो विनाश के कगार पर थे—एक बहुत बड़ी सेना के द्वारा कुचले जाने वाले थे। निश्चित रूप से उन्होंने वही भय महसूस किया होगा जो हम किसी शक्तिशाली शत्रु का सामना करते समय महसूस करते हैं। फिर भी, उन्होंने आनन्दित होने का चुनाव किया, और उनकी इस प्रतिक्रिया ने उनके लिए छुटकारे का मार्ग खोला।

“जिस समय उन्होंने गाना और स्तुति करना आरम्भ किया, उसी समय प्रभु ने अम्मोन, मोआब और सेईर पर्वत की सेनाओं को आपस में लड़ने पर लगा दिया। ... जब यहूदा की सेना जंगल के उस निगरानी स्थान पर पहुँची, तो जहाँ तक उनकी दृष्टि जाती थी, भूमि पर मृत शरीर पड़े थे। शत्रुओं में से एक भी नहीं बचा था” (2 इतिहास अध्याय 20 आयत 22 से 24)।

इस घटना में जो हुआ, उस पर ध्यान दीजिए। यहोशापात और यहूदा संख्या में अत्यंत कम थे, फिर भी उन्होंने परमेश्वर के सहायता के वचन पर विश्वास किया। जब वे युद्ध के लिए आगे बढ़े, तो उन्होंने अपनी सेना के आगे लोगों को भेजकर परमेश्वर की भलाई और उसके अद्भुत कार्यों की घोषणा करवाकर अपना विश्वास प्रकट किया। परिणाम क्या हुआ? उस दिन यहूदा ने अद्भुत विजय प्राप्त की। उनकी महान विजय सैन्य शक्ति से नहीं, बल्कि स्तुति के द्वारा आई। पवित्रशास्त्र कहता है, “क्योंकि प्रभु ने उन्हें उनके शत्रुओं पर आनन्दित किया” (2 इतिहास अध्याय 20 आयत 27)। उन्होंने अपने शत्रुओं को स्तुति के द्वारा पराजित किया।

स्तुति ने परमेश्वर के लिए अपना उद्धार दिखाने का मार्ग तैयार किया। स्तुति ने शत्रु को रोक दिया और बदला लेने वाले को शांत कर दिया। और परमेश्वर की महिमा हुई, क्योंकि जब आसपास के राज्यों ने सुना कि उसने इस्राएल के लिए क्या किया, तो उन पर प्रभु का भय और विस्मय छा गया।

शिकायत का उपचार।

स्तुति न केवल परमेश्वर की महिमा करती है और उसकी सामर्थ्य के लिए द्वार खोलती है, बल्कि यह शिकायत करने की विनाशकारी आदत का उपचार भी है।

शिकायत असंतोष को प्रकट करती है। यह कृतज्ञता के बिल्कुल विपरीत है। जब हम जीवन की परीक्षाओं का सामना करते हैं, तो हममें से बहुत से लोग इस बारे में बात करते हैं कि हमारे पास क्या नहीं है और क्या सही नहीं चल रहा है। फिर हम अपनी परिस्थिति के बारे में शिकायतों की एक लंबी सूची लेकर परमेश्वर के पास जाते हैं और अपनी प्रार्थना के अंत में “कृपया मेरी सहायता करो” जोड़ देते हैं। परन्तु जब हम शिकायत करते हैं, तब हम स्वर्ग की भाषा नहीं बोल रहे होते।

स्वर्ग में केवल धन्यवाद की भाषा बोली जाती है।

शिकायत वास्तव में और अधिक परेशानी लेकर आती है। क्या तुम्हें मिस्र से कनान जाते समय इस्राएलियों की याद है? उन्होंने अपने सामने आई अनेक चुनौतियों के बारे में कुड़कुड़ाहट की और अपने ऊपर विनाश ले आए (गिनती अध्याय 21 आयत 4 से 6)। बाइबल हमें चेतावनी देती है कि हम वही गलती न करें। “और असंतोषपूर्वक कुड़कुड़ाओ मत, जैसा उनमें से कुछ ने किया और विनाश करने वाले [मृत्यु] के द्वारा नष्ट कर दिए गए” (1 कुरिन्थियों अध्याय 10 आयत 10)।

परमेश्वर की स्तुति शिकायत का प्रतिकार है। हर परिस्थिति में धन्यवाद देने के लिए हमेशा कुछ न कुछ होता है—उस भलाई के लिए भी जिसे हम देख सकते हैं, और उस भलाई के लिए भी जिसे हम अभी तक नहीं देख पाए हैं।

कनान की कठिन यात्रा में इस्राएल की सन्तानों ने अनेक चुनौतियों का सामना किया, फिर भी उनकी यात्रा के पूरे समय में उनके पास धन्यवाद देने के लिए बहुत कुछ था। वे मिस्र की दासता से अपने महान छुटकारे के लिए परमेश्वर की स्तुति कर सकते थे। वे उस अद्भुत देश के लिए परमेश्वर का धन्यवाद कर सकते थे जहाँ वह उन्हें ले जा रहा था। वे उस भोजन, पानी, मार्गदर्शन और सुरक्षा के लिए आनन्दित हो सकते थे जो परमेश्वर ने उन्हें मरुभूमि के जंगल से गुजरते समय प्रदान किया। परन्तु इसके बजाय, उन्होंने शिकायत की।

तुम और मैं भी, चाहे हम किसी भी परिस्थिति का सामना कर रहे हों, धन्यवाद देने के लिए बहुत कुछ रखते हैं। हम परमेश्वर की स्तुति कर सकते हैं कि उसने हमें अंधकार के राज्य से छुड़ाकर मसीह में विश्वास के द्वारा अपना पुत्र या पुत्री बनाया है। हम उसका धन्यवाद कर सकते हैं कि स्वर्ग में हमारे लिए एक सुंदर घर तैयार है। हम आनन्दित हो सकते हैं कि परमेश्वर हमारे साथ है और हमारे पक्ष में है, और जैसे उसने इस्राएल के साथ किया, वैसे ही वह हमें तब तक संभाले रखेगा जब तक पूरी तरह बाहर न निकाल दे।

क्या और क्यों।

जब क्लेश हमारे सामने आता है, तब हमें क्या करना चाहिए? हमें उसे पूर्ण आनन्द की बात समझना चाहिए, अर्थात् उसे परमेश्वर के प्रति स्तुति और धन्यवाद के साथ प्रतिक्रिया देने का अवसर मानना चाहिए।

हमें ऐसा क्यों करना चाहिए?

- प्रभु की स्तुति करना हमेशा उचित है, चाहे हमारे जीवन में कुछ भी हो रहा हो।
- स्तुति परमेश्वर की महिमा और आदर करती है।
- स्तुति शत्रु को रोकती है और बदला लेने वाले को शांत करती है।
- स्तुति परमेश्वर के लिए अपना उद्धार हमें दिखाने का मार्ग तैयार करती है।

विपत्ति के सामने हम साहस के साथ परमेश्वर की भलाई और मनुष्यों की सन्तानों के प्रति उसके अद्भुत कार्यों की घोषणा कर सकते हैं। हम उस सब के लिए कृतज्ञ हो सकते हैं जो परमेश्वर पहले ही कर चुका है, जो वह अभी कर रहा है, और जो वह आगे करेगा। हर परिस्थिति में, शिकायत करने के बजाय, हम आनन्दित होने का चुनाव कर सकते हैं।



यदि जीवन की परीक्षाओं के प्रति तुम्हारा दृष्टिकोण सही नहीं है, तो जब कठिनाइयाँ आती हैं, तब प्रभु का धन्यवाद करना और उसकी स्तुति करना कठिन हो सकता है। अगले अध्याय में हम इस विषय पर विचार करेंगे।



कठिनाइयों के प्रति सही दृष्टिकोण

यह अत्यंत आवश्यक है कि हम जीवन की कठिनाइयों को अनन्तकाल के दृष्टिकोण से देखना सीखें। अनन्त दृष्टिकोण होने से, चाहे कुछ भी हो जाए, आनन्दित होना अधिक आसान हो जाता है। अनन्तकाल की तुलना में, जीवन भर का दुःख भी अत्यंत छोटा है। स्वर्ग में कोई भी व्यक्ति पृथ्वी पर अपने जीवन के दौरान जिन बातों का सामना किया, उनके लिए रो नहीं रहा है।

मैं लोगों द्वारा अनुभव किए जाने वाले वास्तविक दर्द और दुःख को कम करके नहीं आँक रही हूँ। मैं केवल कठिनाइयों को सही दृष्टिकोण में रख रही हूँ ताकि जीवन की विपत्तियों का बोझ कुछ हल्का हो सके।

इस अध्याय में, हम पौलुस, यूसुफ और मूसा के दृष्टिकोण पर विचार करना चाहते हैं। अनेक चुनौतियों का सामना करने के बावजूद, उनके दृष्टिकोण ने उन्हें परमेश्वर की स्तुति करने में सहायता की। और प्रत्येक व्यक्ति ने देखा कि कैसे परमेश्वर ने उनकी परिस्थितियों में सामर्थ्य से कार्य किया और बुराई में से भलाई उत्पन्न की।

पौलुस का दृष्टिकोण।

प्रेरित पौलुस ने अपने जीवन को अनन्तकाल के दृष्टिकोण से देखा, जिसने उसके लिए जेल में भी आनन्दित होना संभव बना दिया। उसने ये शब्द लिखे:

“क्योंकि हमारा हल्का और क्षणिक क्लेश हमारे लिए ऐसी अनन्त महिमा उत्पन्न कर रहा है जो उन सब से कहीं अधिक महान है। इसलिए हम अपनी दृष्टि देखी हुई वस्तुओं पर नहीं, परन्तु अनदेखी वस्तुओं पर लगाते हैं; क्योंकि जो दिखाई देती हैं वे थोड़े समय की हैं, परन्तु जो दिखाई नहीं देती वे अनन्त हैं” (2 कुरिन्थियों अध्याय 4 आयत 17 से 18)।

पौलुस का यह दृष्टिकोण उसे उन अनेक कठिनाइयों, सतावों और क्लेशों को, जिन्हें उसने सहा, “क्षणिक” और “हल्का” कहने योग्य बनाता था। इसका अर्थ यह नहीं कि पौलुस उन्हें पसंद करता था या उनका आनंद लेता था। इसका अर्थ यह है कि उसकी परेशानियाँ उस पर बोझ नहीं बनती थीं, क्योंकि अनन्तकाल की तुलना में वे बहुत छोटी थीं। पौलुस समझता था कि पृथ्वी पर उसका जीवन उसके अस्तित्व का बहुत छोटा भाग है और उसकी परेशानियाँ सदा नहीं रहने वालीं। इस दृष्टिकोण ने उसे जीवन के दर्द को सही परिप्रेक्ष्य में रखने में सहायता दी।

ध्यान दीजिए कि पौलुस ने कहा कि उसने अपना ध्यान अपनी परिस्थितियों पर नहीं, बल्कि उन बातों पर केंद्रित किया जिन्हें वह देख नहीं सकता था। उसने ऐसा पवित्रशास्त्र में परमेश्वर की भलाई और उसके कार्यों के विषय में लिखे वचनों को स्मरण करके किया। पौलुस जानता था कि परमेश्वर का अदृश्य राज्य, अपनी पूर्ण सामर्थ्य और प्रबंध के साथ, उस सब से अधिक स्थायी है जो वह देख सकता था, और अंततः उसी को बदल देगा। इसलिए उसने अपने जीवन के दृष्टिकोण को इसी महान वास्तविकता पर आधारित किया।

पौलुस अब स्वर्ग में प्रभु के साथ अनन्त जीवन के आशीषों का आनंद ले रहा है। वह उन वर्षों को बहुत पहले भूल चुका है जो उसने जेल में बिताए, वे मारें जो उसने सही, और वे जहाज़-डूबने की घटनाएँ जिनका उसने सामना किया। ऐसा ही एक दिन तुम्हारे और मेरे लिए भी आने वाला है—एक दिन जब जो कुछ हम अभी अनुभव कर रहे हैं, उसका कोई महत्व नहीं रहेगा। जो आनन्द हमारी प्रतीक्षा कर रहे हैं, वे जीवन के घावों को मिटा देंगे। अपनी कठिनाइयों को अनन्तकाल के प्रकाश में देखना हमें, चाहे हम कुछ भी देखें या महसूस करें, परमेश्वर की स्तुति करने में सहायता करता है।

पौलुस यह भी जानता था कि सुसमाचार का प्रचार करते समय जो दुःख उसने सहन किए, वे अनन्त परिणाम उत्पन्न कर रहे थे। उसकी सेवकाई के द्वारा बहुत-से लोग मसीह में विश्वास लाए। इस जागरूकता ने उसकी कठिनाइयों के प्रति सही दृष्टिकोण बनाए रखने में सहायता की। वे दुःख उस परिणाम के कारण सहने योग्य थे। इस ज्ञान ने पौलुस को अत्यंत चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों में भी आनन्दित रहने में सहायता दी।

तुम शायद सोचो कि पौलुस का जीवन अनन्त परिणामों वाला था क्योंकि वह एक महान प्रेरित था, परन्तु तुम्हारा जीवन कभी उसके समान नहीं हो सकता। परमेश्वर तुमसे पौलुस के जीवन की नकल करने की अपेक्षा नहीं करता। वह अपेक्षा करता है कि तुम वही जीवन जियो जो तुम्हें दिया गया है। बाइबल साधारण लोगों के उदाहरणों से भरी हुई है जिन्होंने जीवन के सामान्य और कठिन कार्यों को पूरा किया। और इस पूरे समय परमेश्वर पर्दे के पीछे कार्य करता रहा ताकि अनन्त परिणाम उत्पन्न हों। एक उदाहरण पर विचार करो।

योनातान का तीर उठाने वाला सेवक।

जब दाऊद ने अपनी प्रसिद्ध लड़ाई में गोलियत को मार डाला, तब राजा शाऊल ने दाऊद को अपने घर में रहने के लिए बुला लिया। परन्तु शाऊल, जो दाऊद की सफलता और बढ़ती लोकप्रियता से लगातार जलता जा रहा था, उसे मार डालने के लिए दृढ़ हो गया। दाऊद अपने प्राण बचाने के लिए भाग गया। शाऊल के पुत्र योनातान ने दाऊद को ढूँढ़ा और उससे कहा कि उसे विश्वास है कि उसका पिता उसे कोई हानि नहीं पहुँचाना चाहता। दोनों ने राजा की वास्तविक मंशा जानने के लिए एक योजना बनाई। योनातान ने निश्चय किया कि वह शाऊल से इस विषय में बात करेगा और फिर अपनी जानकारी दाऊद को बताएगा।

दाऊद को शाऊल से वास्तविक खतरा था, इसलिए उसने और योनातान ने शाऊल की मंशा को एक असामान्य तरीके से प्रकट करने का निर्णय लिया। तय समय पर, योनातान पास के एक खेत में जाएगा जहाँ दाऊद छिपा हुआ था और कुछ तीर चलाएगा। यदि योनातान तीर एक दिशा में चलाता, तो उसका अर्थ होता कि शाऊल दाऊद के लिए खतरा नहीं है। यदि तीर दूसरी जगह जाते, तो उसका अर्थ होता कि दाऊद को भाग जाना चाहिए।

योनातान ने समझ लिया कि शाऊल दाऊद को मार डालना चाहता है, इसलिए उसने अपने तीर उसी दिशा में चलाए जो यह संदेश पहुँचाते थे। अब उस बात पर ध्यान दीजिए जो हमारे अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण है। योनातान अपने साथ अपने एक युवा सेवक को तीर उठाने के लिए ले गया।

“‘दौड़ना शुरू करो,’ योनातान ने उस लड़के से कहा, ‘ताकि मैं जो तीर चलाऊँ, तुम उन्हें ढूँढ़ सको।’ तब वह लड़का दौड़ा, और योनातान ने एक तीर उसके आगे चला दिया। जब वह लड़का लगभग उस तीर तक पहुँच गया, तो योनातान ने पुकारकर कहा, ‘तीर अभी भी तुमसे आगे है। जल्दी करो, जल्दी करो, रुको मत।’ तब उस लड़के ने जल्दी से तीर उठाए और अपने स्वामी के पास लौट आया। वह, निश्चय ही, यह नहीं समझता था कि योनातान का क्या अर्थ है; केवल योनातान और दाऊद ही जानते थे। फिर योनातान ने अपना धनुष और तीर उस लड़के को देकर कहा कि उन्हें नगर में वापस ले जाए” (1 शमूएल अध्याय 20 आयत 36 से 40)।

कितना साधारण और देखने में मूल्यहीन कार्य था—एक गर्म दिन में इधर-उधर दौड़कर एक धनी राजकुमार के चलाए हुए तीर उठाना। उस तीर उठाने वाले सेवक को तनिक भी पता नहीं था कि जिन तीरों को वह उठा रहा है, वे दाऊद तक एक अत्यंत महत्वपूर्ण संदेश पहुँचा रहे हैं, या कि वह स्वयं एक ऐसी घटना का हिस्सा है जिसके अनन्त परिणाम होने वाले हैं। जो जानकारी उसने अनजाने में पहुँचाई, उसने दाऊद के प्राण बचाने में सहायता की, ताकि वह इस्राएल का राजा बन सके, सुलैमान का पिता बने, और उस वंशावली को आगे बढ़ाए जिसके माध्यम से अंततः उद्धारकर्ता यीशु संसार में आने वाला था।

मुझे पूरा विश्वास है कि जब तुम और मैं स्वर्ग में पहुँचेंगे, तब हम ऐसे लोगों से मिलेंगे जिनकी अनन्त नियति हमारे साथ उनके साधारण जीवन के संपर्कों से प्रभावित हुई होगी। ठीक योनातान के तीर उठाने वाले सेवक की तरह, हमारी दैनिक गतिविधियाँ भी अर्थहीन और साधारण लग सकती हैं। परन्तु यदि हम यह समझें कि जब परमेश्वर अपने परिवार को एकत्र कर रहा है, तब वह पर्दे के पीछे कार्य कर रहा है, तो यह हमारे बोझ को हल्का कर देगा और हमारी परिस्थितियों के दबाव को कम कर देगा।

यह दृष्टिकोण हमें—जो कुछ हम देखते हैं उसके बावजूद—आनन्दित होने में सहायता करेगा, ठीक वैसे ही जैसे उसने पौलुस की सहायता की।

यूसुफ का दृष्टिकोण।

पौलुस की तरह, यूसुफ ने भी अपने सामने आने वाली अनेक चुनौतियों के दौरान परमेश्वर की स्तुति के साथ प्रतिक्रिया दी। जब यूसुफ दास के रूप में मिस्र पहुँचा, तो पोतीफ़र ने उसे खरीद लिया और शीघ्र ही उसने ध्यान दिया कि परमेश्वर यूसुफ को सफल बना रहा है। जब यूसुफ बलात्कार के झूठे आरोप में जेल गया, तब कारागार के रखवाले ने भी देखा कि परमेश्वर यूसुफ की सहायता कर रहा है (उत्पत्ति अध्याय 39 आयत 1 से 4 और 21 से 23)।

ये दोनों व्यक्ति अपनी आँखों से परमेश्वर को नहीं देख सकते थे, फिर भी वे जानते थे कि परमेश्वर यूसुफ की सहायता करता है। कैसे? यूसुफ ने अवश्य ही परमेश्वर को ऐसे तरीके से स्वीकार किया होगा जो स्पष्ट रूप से दिखाई देता था। परमेश्वर को स्वीकार करने का अर्थ है उसकी स्तुति करना—यह बताते हुए कि वह कौन है, उसने क्या किया है, क्या कर रहा है, और क्या करेगा। स्पष्ट है कि यूसुफ ने पोतीफ़र और जेलर की उपस्थिति में परमेश्वर की स्तुति की।

मेरी हड्डियाँ वापस ले जाना।

यूसुफ के पास भी अनन्तकाल का दृष्टिकोण था। वह समझता था कि जीवन केवल इसी जीवन तक सीमित नहीं है। इस ज्ञान ने उसे उन अनेक विपत्तियों का सामना करने में सहायता दी जिनसे वह गुज़रा।

उसकी परीक्षाएँ शुरू होने से पहले परमेश्वर ने यूसुफ से दो प्रतिज्ञाएँ की थीं। परमेश्वर ने उससे महानता का वादा किया और यह भी प्रतिज्ञा की कि वह उसे कनान में एक देश देगा (उत्पत्ति अध्याय 37 आयत 5 से 8; उत्पत्ति अध्याय 35 आयत 9 से 12)। परमेश्वर ने यूसुफ के जीवनकाल में उसकी महानता की बुलाहट को पूरा किया, परन्तु यूसुफ कभी अपने देश लौटकर रहने नहीं गया। उसकी मृत्यु मिस्र में हुई। अपनी मृत्यु से कुछ समय पहले, यूसुफ

ने अपने परिवार से कहा कि जब वे एक दिन अपने देश लौटें, जैसा कि वह जानता था कि वे लौटेंगे, तब उसकी हड्डियाँ भी कनान ले जाएँ।

“‘शीघ्र ही मैं मर जाऊँगा,’ यूसुफ ने अपने भाइयों से कहा, ‘परन्तु परमेश्वर निश्चित रूप से तुम्हारे पास आएगा और तुम्हें इस मिस्र देश से निकालकर ले जाएगा। वह तुम्हें उस देश में वापस ले जाएगा जिसे उसने अब्राहम, इसहाक और याकूब के वंशजों को देने की शपथ खाई थी।’ तब यूसुफ ने इस्राएल के पुत्रों से शपथ खिलाई और कहा, ‘जब परमेश्वर तुम्हें कनान वापस ले जाए, तब मेरी देह को भी अपने साथ ले जाना।’ इस प्रकार यूसुफ एक सौ दस वर्ष की आयु में मर गया। उन्होंने उसके शरीर को सुगन्धित पदार्थों से सुरक्षित किया और उसे मिस्र में एक ताबूत में रखा” (उत्पत्ति अध्याय 50 आयत 24 से 26)।

चार सौ वर्ष बाद, जब यूसुफ का परिवार अंततः मिस्र से निकला, तब वे उसकी हड्डियाँ भी अपने साथ ले गए, जैसा उसने निर्देश दिया था। मूसा ने इसका ध्यान रखा।

“इस्राएली एक संगठित सेना की तरह मिस्र से निकले। मूसा यूसुफ की हड्डियाँ अपने साथ ले गया, क्योंकि यूसुफ ने इस्राएल के पुत्रों से शपथ खिलावाई थी कि जब परमेश्वर उन्हें मिस्र से बाहर ले जाएगा—जैसा कि यूसुफ को पूरा विश्वास था—तब वे उसकी हड्डियाँ अपने साथ ले जाएँगे” (निर्गमन अध्याय 13 आयत 18 से 19)।

यूसुफ समझता था कि उसकी नियति उसकी मृत्यु पर समाप्त नहीं होती। वह जानता था कि एक दिन ऐसा आने वाला है जब वह फिर से अपने जन्मभूमि में जीवित रहेगा। यूसुफ इस समय स्वर्ग में है और यीशु के दूसरे आगमन पर पृथ्वी पर अपनी वापसी की प्रतीक्षा कर रहा है। उस समय, यूसुफ की हड्डियाँ पुनर्जीवित की जाएँगी और मृतकों के पुनरुत्थान में उसका शरीर फिर से उससे मिल जाएगा। उसके पाँव सबसे पहले कनान की भूमि पर खड़े होंगे, और इस प्रकार परमेश्वर की यूसुफ के लिए दूसरी प्रतिज्ञा पूरी होगी।

जब हम यह समझते हैं कि जीवन केवल इसी जीवन तक सीमित नहीं है, तब अधूरे सपनों के तनाव और पीड़ा से हमें राहत मिल सकती है। आने वाले जीवन में सब कुछ ठीक कर दिया जाएगा। यह दृष्टिकोण हमारे बोझ को हल्का करता है और हमारी परीक्षाओं के बीच भी

परमेश्वर की स्तुति करना हमारे लिए अधिक सरल बना देता है। जैसा इसने यूसुफ के लिए किया, वैसा ही यह हमारे लिए भी करेगा।

मूसा का दृष्टिकोण।

इसमें कोई संदेह नहीं कि मूसा स्तुति करने वाला व्यक्ति था। लाल समुद्र पार करने के बाद, उसने और समस्त इस्राएल ने एकमात्र सर्वशक्तिमान परमेश्वर की स्तुति गाई।

“मैं प्रभु के लिए गाऊँगा, क्योंकि उसने महिमा के साथ महान विजय प्राप्त की है; उसने घोड़े और उसके सवार दोनों को समुद्र में फेंक दिया है। प्रभु मेरी शक्ति और मेरा गीत है; वही मेरा उद्धार बना है। वही मेरा परमेश्वर है, और मैं उसकी स्तुति करूँगा; वह मेरे पिता का परमेश्वर है, और मैं उसे महान ठहराऊँगा” (निर्गमन अध्याय 15 आयत 1 से 2)।

मूसा ने केवल परमेश्वर का छुटकारा देखने के बाद ही आनन्द नहीं मनाया। उसने परमेश्वर की भलाई को देखने से पहले ही उसकी घोषणा की।

बाइबल बताती है कि प्रतिज्ञा के देश की सीमा पर, गढ़वाले नगरों और दैत्यों का सामना करते हुए भी, मूसा ने परमेश्वर को स्वीकार किया। मूसा ने परमेश्वर की पिछली सहायता, वर्तमान प्रबंध और भविष्य की प्रतिज्ञाओं की घोषणा की। दूसरे शब्दों में, उसने परमेश्वर की स्तुति की।

“परन्तु मैंने (इस्राएल के लोगों से) कहा, ‘मत डरो! तुम्हारा परमेश्वर यहोवा तुम्हारे आगे-आगे जा रहा है। वह तुम्हारे लिए लड़ेगा, जैसा तुमने उसे मिस्र में करते देखा। और तुमने देखा कि इस जंगल में तुम्हारे परमेश्वर यहोवा ने बार-बार तुम्हारी देखभाल की, जैसे पिता अपने बच्चे की देखभाल करता है। अब वह तुम्हें इस स्थान तक ले आया है’” (व्यवस्थाविवरण अध्याय 1 आयत 29 से 31)।

मूसा ने पवित्रशास्त्र में दर्ज कई गीत भी रचे, जिनमें भजन संहिता अध्याय 91 और मूसा का गीत (व्यवस्थाविवरण अध्याय 32) शामिल हैं। ये हमें जीवन के प्रति मूसा के दृष्टिकोण की झलक देते हैं। मूसा समझता था कि परिस्थितियाँ कैसी भी दिखाई दें, परमेश्वर कौन है और वह क्या करता है, इसकी घोषणा करना कितना महत्वपूर्ण है। मूसा ने लिखा:

“जो परमप्रधान के गुप्त स्थान में रहता है, वह सर्वशक्तिमान की छाया में बना रहेगा। मैं प्रभु के विषय में कहूँगा, ‘वह मेरा शरणस्थान और मेरा गढ़ है; वही मेरा परमेश्वर है; मैं उसी पर भरोसा रखूँगा’” (भजन संहिता अध्याय 91 आयत 1 से 2)।

“मैं प्रभु के नाम की घोषणा करूँगा; हमारा परमेश्वर कितना महिमामय है! वह चट्टान है; उसका कार्य सिद्ध है। वह जो कुछ करता है, सब न्यायपूर्ण और उचित है। वह विश्वासयोग्य परमेश्वर है जो कोई बुराई नहीं करता; वह कितना न्यायी और सीधा है” (व्यवस्थाविवरण अध्याय 32 आयत 3 से 4)।

मूसा न केवल स्तुति करने वाला व्यक्ति था, बल्कि वह ऐसा व्यक्ति भी था जो अनन्तकाल को दृष्टि में रखकर जीता था। मूसा मिस्र के राजकुमार के रूप में बड़ा हुआ। परन्तु जब वह वयस्क हुआ, तो उसने अपने पद के विशेषाधिकार और सामर्थ्य को ठुकरा दिया और इब्रानी लोगों के साथ दुःख सहने का चुनाव किया। मूसा समझता था कि फिरौन के महल के सुख थोड़े समय के लिए हैं, परन्तु मसीह की सेवा के लिए जो कठिनाइयाँ वह सहता है, वे उसके लिए कभी न समाप्त होने वाले प्रतिफल लाएँगी।

“विश्वास से मूसा ने, जब वह बड़ा हो गया, फिरौन की बेटी का पुत्र कहलाना स्वीकार नहीं किया। उसने थोड़े समय के लिए पाप के सुख भोगने की अपेक्षा परमेश्वर के लोगों के साथ दुःख उठाना चुन लिया। उसने परमेश्वर के कारण होने वाले अपमान को मिस्र के खज़ानों से अधिक मूल्यवान समझा, क्योंकि उसकी दृष्टि अपने प्रतिफल पर लगी हुई थी” (इब्रानियों अध्याय 11 आयत 24 से 26)।

मूसा ने मिस्र की धन-दौलत और अधिकार को अस्वीकार करने की सामर्थ्य इस कारण पाई क्योंकि उसने अपने आसपास दिखाई देने वाली बातों से आगे बढ़कर अदृश्य परमेश्वर और उसके राज्य पर दृष्टि लगाई।

“विश्वास से उसने राजा के क्रोध से न डरते हुए मिस्र छोड़ दिया; क्योंकि वह उस अदृश्य को देखने के समान दृढ़ बना रहा” (इब्रानियों अध्याय 11 आयत 27)।

मूसा समझता था कि इस जीवन के दुःख और हानियाँ, आगे आने वाले आनन्द और प्रतिफल की तुलना में बहुत छोटी हैं। पौलुस और यूसुफ की तरह, उसने भी दिखाई देने वाली बातों से आगे बढ़कर सर्वशक्तिमान परमेश्वर पर दृष्टि रखी, जो उसके साथ था और उसके पक्ष में था। मूसा के इस दृष्टिकोण ने उसे यह संभव बनाया कि चाहे उसके सामने कुछ भी आए, वह परमेश्वर की स्तुति कर सके।



इस वर्तमान क्षण से बढ़कर भी जीवन है। केवल यही जीवन ही सब कुछ नहीं है। जब तुम जीवन की कठिनाइयों को अनन्तकाल के दृष्टिकोण से देखना सीखते हो, तो उनका बोझ हल्का हो जाता है। जब तुम अपनी कठिनाइयों को अनन्तता के दृष्टिकोण से देखते हो, तो प्रभु का धन्यवाद करना और उसकी स्तुति करना अधिक सहज हो जाता है। और यह, बदले में, उसके लिए मार्ग तैयार करता है कि वह तुम्हें अपना उद्धार दिखाए—इस जीवन में भी और आने वाले जीवन में भी।



प्रतिक्रिया दें, प्रतिक्रिया न करें

यदि हमें जीवन की चुनौतियों का सामना इस प्रकार करना है कि परमेश्वर की महिमा हो और हमें भलाई मिले, तो हमें जीवन की कठिनाइयों पर प्रतिक्रिया करने के बजाय उत्तर देना सीखना होगा। तुम सोच सकते हो, “इन दोनों में क्या अंतर है?”

मान लो तुम किसी गलियारे से होकर चल रहे हो और मैं अचानक एक दरवाज़े के पीछे से कूदकर “भूँ” चिल्ला दूँ। संभवतः तुम चौंककर पीछे हट जाओगे और चीख निकल जाएगी। उस क्षण, मेरा छोटा-सा अचानक किया गया कार्य तुम्हारे व्यवहार को नियंत्रित करेगा। जब तुम किसी बात पर केवल प्रतिक्रिया करते हो, तो वह घटना तुम्हारे कार्यों को निर्धारित करती है।

परन्तु उत्तर देना अलग बात है। उत्तर देने का अर्थ है “जवाब देना।” जब तुम किसी घटना का उत्तर देते हो, तो तुम उसे परमेश्वर के वचन के द्वारा जवाब देते हो। तुम यह बोलना आरम्भ करते हो कि परमेश्वर कौन है और उसने क्या किया है, क्या कर रहा है, और क्या करेगा। तब परिस्थिति तुम्हारे व्यवहार को नियंत्रित नहीं करती। जब तुम परमेश्वर को स्वीकार करते हुए उसकी स्तुति करते हो, तब परमेश्वर का वचन तुम्हारे कार्यों का मार्गदर्शन करता है।

इससे क्या अंतर पड़ता है?

प्रतिक्रिया करना और उत्तर देना अलग-अलग परिणाम उत्पन्न करते हैं। आइए कुछ उदाहरणों के द्वारा देखें कि उत्तर देने और केवल प्रतिक्रिया करने के क्या परिणाम होते हैं।

याकूब की प्रतिक्रिया।

हमने अध्याय 7 में यूसुफ की कहानी पर विचार किया था। यह एक अद्भुत विवरण है कि कैसे परमेश्वर ने चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों में से महान भलाई उत्पन्न करने के लिए कार्य किया। हमने सीखा कि यूसुफ ऐसा व्यक्ति था जिसने अपनी कठिन परीक्षाओं का उत्तर परमेश्वर को स्वीकार करके दिया। हमने यह भी देखा कि उत्तर देने की उसकी क्षमता ने उसे अपनी परीक्षाओं का प्रभावी रूप से सामना करने में सहायता की। परन्तु यूसुफ की कहानी में हमें एक ऐसा व्यक्ति भी मिलता है जिसने कठिनाई के सामने केवल प्रतिक्रिया की—यूसुफ का पिता, याकूब।

याकूब ने अपने प्रिय पुत्र यूसुफ को खो दिया, जब उसके अन्य पुत्रों ने यूसुफ को दासत्व में बेच दिया। कई वर्षों बाद, एक बड़े अकाल के समय, याकूब ने अपने बचे हुए पुत्रों को (सबसे छोटे बिन्यामीन को छोड़कर) मिस्र में भोजन खरीदने के लिए भेजा। जब वे मिस्र पहुँचे, तो वे उस व्यक्ति के सामने उपस्थित हुए जो भोजन वितरण का प्रभारी था। वह यूसुफ था। उसने अपने भाइयों को पहचान लिया, परन्तु वे उसे नहीं पहचान सके।

यूसुफ ने उन्हें वह सामग्री दे दी जिसकी उन्हें आवश्यकता थी, परन्तु यह देखने के लिए कि पिछली मुलाकात के बाद से उनके चरित्र में कोई परिवर्तन आया है या नहीं, उसने उन्हें कई परीक्षाओं से गुज़ारा। उन्हीं परीक्षाओं में से एक में, यूसुफ ने माँग की कि वे बिन्यामीन को उसके पास लाएँ। यूसुफ ने योजना बनाई कि जब तक वे उसकी आज्ञा का पालन करके बिन्यामीन को नहीं लाते, तब तक वह उनके एक और भाई, शिमोन, को मिस्र की जेल में बंद रखेगा।

याकूब के पुत्र बहुत-सा भोजन लेकर, परन्तु शिमोन के बिना, कनान लौट आए। उन्होंने अपने पिता को सब कुछ बताया, और याकूब ने उनकी बात सुनकर प्रतिक्रिया की। उसने परिस्थितियों को अपने व्यवहार को नियंत्रित करने दिया।

“याकूब चिल्लाकर बोला, ‘तुमने मुझे मेरे बच्चों से वंचित कर दिया है! यूसुफ चला गया, शिमोन भी चला गया, और अब तुम बिन्यामीन को भी ले जाना चाहते हो! सब कुछ मेरे विरुद्ध जा रहा है!’” (उत्पत्ति अध्याय 42 आयत 36)।

याकूब की प्रतिक्रिया उस आधार पर पूरी तरह स्वाभाविक थी जो वह अपनी आँखों से देख सकता था। सब कुछ गलत होता हुआ दिखाई दे रहा था। परन्तु किसी भी परिस्थिति में केवल दिखाई देने वाली बातें पूरी सच्चाई नहीं बताती—इस परिस्थिति में भी नहीं। वास्तव में, परमेश्वर पर्दे के पीछे कार्य कर रहा था। सब कुछ याकूब के विरुद्ध नहीं था। जो घटनाएँ हो रही थीं, वे वास्तव में याकूब और उसके परिवार के लिए महान आशीषों की ओर ले जा रही थीं। याकूब न तो बिन्यामीन को खोने वाला था और न ही शिमोन को। वह अपने लंबे समय से बिछड़े पुत्र यूसुफ से फिर मिलने वाला था। और वह तथा उसका परिवार मिस्र में रहने के लिए एक स्थान पाने वाले थे, जहाँ अकाल के शेष वर्षों के लिए भोजन की पूरी व्यवस्था थी।

याकूब की इस प्रतिक्रिया का क्या प्रभाव पड़ा? यद्यपि इससे परमेश्वर की योजना नहीं रुकी—न यूसुफ और शिमोन से उसका पुनर्मिलन रुका, न परिवार का मिस्र जाना—फिर भी याकूब के विनाशकारी शब्दों ने उसके अपने भावनात्मक दर्द को बढ़ा दिया। उसकी आवेगपूर्ण प्रतिक्रिया ने पहले से कठिन परिस्थिति को सबके लिए और अधिक तनावपूर्ण बना दिया।

याकूब को क्या करना चाहिए था? वह अपने पुत्रों की मिस्र यात्रा का वृत्तांत सुनकर परमेश्वर की पिछली सहायता को याद कर सकता था और उसकी वर्तमान तथा भविष्य की व्यवस्था की प्रतिज्ञा की घोषणा कर सकता था। ऐसी प्रतिक्रिया याकूब और उसके परिवार को आशा देती और मिस्र की घटनाओं से उत्पन्न पीड़ा को कम करती।

इस्राएल की प्रतिक्रिया।

पहले हमने कनान की सीमा पर खड़े इस्राएल का उल्लेख किया था। आपको याद होगा कि उस देश का निरीक्षण करने के लिए बारह भेदिए भेजे गए थे। वे लौटकर प्रतीक्षा कर रहे

इस्राएलियों के पास गढ़वाले नगरों और ऐसे शत्रुओं की भयावह रिपोर्ट लेकर आए जिन्हें जीतना असंभव प्रतीत होता था।

“हम उनका सामना नहीं कर सकते! वे हमसे अधिक शक्तिशाली हैं! ... जिस देश का हमने पता लगाया है, वह वहाँ रहने वालों को निगल जाएगा। जिन लोगों को हमने वहाँ देखा, वे सब बहुत विशालकाय थे। ... हम अपने आपको उनके सामने टिड्डियों के समान महसूस करते थे, और उनकी दृष्टि में भी हम वैसे ही थे” (गिनती अध्याय 13 आयत 31 से 33)।

इस्राएल ने प्रतिक्रिया की—उन्होंने उस देश के विषय में भेदियों की रिपोर्ट को अपने कार्यों को निर्धारित करने दिया। अंततः उन्होंने कनान में प्रवेश करने से इनकार कर दिया। इस मामले में, केवल प्रतिक्रिया करने से इब्रानियों को अतिरिक्त भावनात्मक पीड़ा ही नहीं मिली, बल्कि उन्होंने परमेश्वर की इच्छा भी खो दी। उस पूरी पीढ़ी ने (दो व्यक्तियों को छोड़कर) उस देश पर कभी अधिकार नहीं किया जिसे परमेश्वर उनके लिए चाहता था।

दो भेदियों ने, जो उन्होंने अपनी जासूसी यात्रा में देखा, उस पर केवल प्रतिक्रिया नहीं की, बल्कि उत्तर दिया। यहोशू और कालेब ने वही बाधाएँ देखीं जो अन्य दस भेदियों ने देखीं, फिर भी उन्होंने अपनी परिस्थितियों का मूल्यांकन इस आधार पर किया कि परमेश्वर ने क्या कहा था। उन्होंने उस देश के विरोध का उत्तर इस प्रतिज्ञा के साथ दिया कि परमेश्वर उनके लिए लड़ेगा।

“‘आओ, हम तुरंत जाकर उस देश पर अधिकार कर लें,’ (कालेब) ने कहा। ‘हम निश्चय ही उसे जीत सकते हैं’” (गिनती अध्याय 13 आयत 30)।

“(यहोशू ने कहा) ‘प्रभु के विरुद्ध विद्रोह मत करो, और उस देश के लोगों से मत डरो। वे तो हमारे लिए केवल असहाय शिकार हैं! उनकी कोई रक्षा नहीं है, परन्तु प्रभु हमारे साथ है! उनसे मत डरो’” (गिनती अध्याय 14 आयत 9)।

यहोशू और कालेब के इस उत्तर ने उन्हें साहस दिया कि वे कनान में प्रवेश करें, अपने शत्रुओं को पराजित करें, और उस सब पर अधिकार करें जिसका परमेश्वर ने उनसे वादा किया था।

हमें पवित्रशास्त्र के इन उदाहरणों पर ध्यान देना चाहिए और केवल प्रतिक्रिया करने के बजाय उत्तर देने की अपनी क्षमता को विकसित करना चाहिए।

हम उत्तर कैसे दें?

हमने अध्याय 9 में देखा था कि बाइबल हमें निर्देश देती है कि परीक्षाओं को आनन्दित होने के अवसर के रूप में देखें (याकूब अध्याय 1 आयत 2)। यह कहने का एक और तरीका है कि क्लेश के प्रति उत्तर दो, केवल प्रतिक्रिया मत करो। परन्तु बाइबल से सही ज्ञान के बिना ऐसा करना असंभव है। यही कारण है कि हमने इस पुस्तक में उल्लिखित विभिन्न विषयों पर समय लेकर विचार किया है।

हमने पवित्रशास्त्र के अनेक वृत्तांतों पर विचार किया है जो हमें दिखाते हैं कि जीवन की चुनौतियों के बीच परमेश्वर कैसे कार्य करता है और वह क्या-क्या करने में समर्थ है। हमने ऐसे उदाहरण देखे हैं जहाँ परमेश्वर ने मनुष्य की स्वतंत्र इच्छा और उसके परिणामों को— यहाँ तक कि उन बातों को भी जिन्हें उसने स्वीकृति नहीं दी—अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उपयोग किया। हमने ऐसे प्रसंग देखे हैं जहाँ परमेश्वर ने वास्तविक बुराई में से सच्ची भलाई उत्पन्न की। ये वृत्तांत हमारी सहायता के लिए लिखे गए थे।

“जो बातें बहुत पहले पवित्रशास्त्र में लिखी गईं, वे हमें शिक्षा देने के लिए लिखी गईं, ताकि हम धीरज और पवित्रशास्त्र से मिलने वाले प्रोत्साहन के द्वारा आशा रखें” (रोमियों अध्याय 15 आयत 4)।

बाइबल से प्राप्त इस समझ के द्वारा अब हम जानते हैं कि उत्तर कैसे देना है। जब कठिनाइयाँ तुम्हारे सामने आएँ, तो परमेश्वर को स्वीकार करो। उसके विषय में बोलो कि वह कौन है, उसने क्या किया है, क्या कर रहा है, और क्या करेगा। उन समयों को याद करो जब परमेश्वर ने अतीत में तुम्हारी सहायता की है, और उसकी वर्तमान तथा भविष्य की व्यवस्था की प्रतिज्ञा को स्मरण करो। जो तुम देखते और महसूस करते हो, उसकी घोषणा करने के

बजाय, अपनी परीक्षाओं का उत्तर इस घोषणा से दो कि परमेश्वर तुम्हारी कठिनाई के विषय में क्या कहता है।

- यह परिस्थिति परमेश्वर से बड़ी नहीं है, और न ही इसने उसे चौंकाया है। उसके पास इससे निपटने की योजना पहले से है। मैं उसकी सहायता देखने से पहले ही उसकी स्तुति और धन्यवाद करूँगा।

- परमेश्वर इस परिस्थिति में पर्दे के पीछे कार्य कर रहा है ताकि अपने लिए अधिकतम महिमा और मेरे तथा जितने अधिक लोगों के लिए संभव हो उतनी अधिक भलाई उत्पन्न करे।

- परमेश्वर इस सब को अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उपयोग करेगा, क्योंकि वह वास्तविक बुराई में से सच्ची भलाई उत्पन्न करता है।

- मेरा स्वर्गीय पिता उचित समय पर कार्य करता है, और सही समय आने पर मैं परिणाम देखूँगा। यदि अल्पकालिक आशीष को दीर्घकालिक और अनन्त भलाई के लिए कुछ समय के लिए टालना पड़े, तो यह मुझे स्वीकार है। मैं इस परिस्थिति में उस पर भरोसा रखता हूँ कि वह वही करेगा जो सर्वोत्तम है।

- परमेश्वर मुझे तब तक संभाले रखेगा जब तक पूरी तरह बाहर न निकाल दे। वह इस परीक्षा के बीच भी मुझे उन्नति करने योग्य बना सकता है।

जब तुम इस प्रकार उत्तर देते हो, तब तुम इस बात की घोषणा कर रहे होते हो कि परमेश्वर के अनुसार वास्तविकता क्या है, न कि केवल यह कि परिस्थितियाँ कैसी दिखाई देती हैं। तब यहोशू और कालेब की तरह, तुम परमेश्वर के साथ सहमति में कार्य करने का साहस पाओगे।

किसी परिस्थिति का उत्तर देने का अर्थ यह नहीं कि तुम कठिनाई के अस्तित्व से इनकार कर रहे हो। बल्कि इसका अर्थ है कि तुम बाइबल की सहायता से उसके पार देखने लगते हो।

परमेश्वर का वचन तुम्हें आश्वस्त करता है कि परिस्थिति में केवल वही नहीं है जो तुम देखते और महसूस करते हो। उसका वचन प्रकट करता है कि परमेश्वर तुम्हारे साथ है, और उसकी उपस्थिति वही सहायता है जिसकी तुम्हें आवश्यकता है। चाहे परीक्षा कितनी ही भयावह क्यों न दिखाई दे, याद रखो कि वह अस्थायी है और परमेश्वर की सामर्थ्य से बदली जा सकती है।

“परमेश्वर हमारा शरणस्थान और बल है... संकट में अति सहज से मिलने वाला और परखा हुआ सहायक है” (भजन संहिता अध्याय 46 आयत 1)।

“परमेश्वर में आशा रख, क्योंकि मैं फिर उसकी स्तुति करूँगा, जो अपनी उपस्थिति के द्वारा मेरी सहायता है” (भजन संहिता अध्याय 42 आयत 5)।

तथापि, मैं आनन्दित रहूँगा।

जब तुम विनाशकारी परिस्थितियों का सामना करते हो, तब तुम्हें आनन्दित होने का चुनाव करना पड़ता है। यह कठिन हो सकता है, जब जो कुछ तुम देखते और महसूस करते हो, वह “टूट जाओ” और “हार मान लो” कह रहा हो। परन्तु केवल प्रतिक्रिया करने के बजाय उत्तर देना उस प्रयास के योग्य है।

भविष्यद्वक्ता हबक्कूक ने इसी प्रकार की परिस्थिति का सामना किया था। वह इस्राएल के दक्षिणी राज्य, यहूदा, के राष्ट्रीय अस्तित्व के अंतिम दिनों में सेवकाई कर रहा था। बार-बार बिना पश्चाताप के मूर्तिपूजा करने के कारण, राष्ट्र बाबुल साम्राज्य के द्वारा कुचला जाने वाला था, यरूशलेम जला दिया जाने वाला था, और लोग एक परदेशी भूमि में निर्वासित किए जाने वाले थे। पवित्रशास्त्र इस आने वाली विपत्ति के प्रति हबक्कूक की प्रतिक्रिया को दर्ज करता है।

“यद्यपि अंजीर के वृक्षों में फूल न लगें, और दाखलताओं में अंगूर न हों; यद्यपि जैतून की फसल नष्ट हो जाए, और खेत सूने और बंजर पड़े रहें; यद्यपि भेड़ें मैदानों में मर जाएँ, और गौशालाएँ पशुओं से खाली हों, तौभी मैं प्रभु में आनन्दित रहूँगा! मैं अपने उद्धार के परमेश्वर

में मगन रहूँगा। प्रभु यहोवा मेरी शक्ति है! वह मुझे हिरनी के समान दूध पाँव देगा और मुझे सुरक्षित ऊँचे स्थानों पर ले जाएगा” (हबक्कूक अध्याय 3 आयत 17 से 19)।

ध्यान दीजिए कि हबक्कूक कहीं भी यह नहीं कहता कि वह आनन्द *महसूस* कर रहा था। उसने अपनी इच्छा का उपयोग करने और परिस्थिति में उचित उत्तर देने का चुनाव करने की बात कही। वह ऐसा कैसे कर सका? वह जानता था कि उसकी परिस्थितियाँ सर्वशक्तिमान प्रभु से बड़ी नहीं हैं। उसे यह विश्वास था कि परमेश्वर उसकी शक्ति होगा और जो कुछ आगे आने वाला है, उसमें से उसे सुरक्षित निकाल ले जाएगा। इस ज्ञान ने उसके बोझ को हल्का किया और परमेश्वर के लिए मार्ग तैयार किया कि वह हबक्कूक को अपना उद्धार दिखाए।



बाइबल से प्राप्त सही ज्ञान के द्वारा—कि परमेश्वर कौन है और वह हमारे जीवन में कैसे कार्य करता है—हम सचमुच प्रभु की भलाई और मनुष्यों की सन्तानों के प्रति उसके अद्भुत कार्यों के लिए उसकी स्तुति कर सकते हैं। हमारे चारों ओर चाहे जो कुछ भी दिखाई दे, हम अदृश्य परमेश्वर और उसकी सहायता को स्वीकार कर सकते हैं, इस विश्वास के साथ कि उचित समय पर हम ठोस और प्रत्यक्ष परिणाम देखेंगे। जब हम जीवन की चुनौतियों का उत्तर परमेश्वर के वचन के द्वारा देना सीख लेते हैं, तब हम सबसे कठिन परीक्षाओं में भी जय प्राप्त कर सकते हैं।

निष्कर्ष

इस गिरे हुए संसार में परेशानी-रहित जीवन जैसी कोई चीज़ नहीं है। हम सभी छोटी परेशानियों से लेकर बड़ी विपत्तियों तक विभिन्न चुनौतियों का सामना करते हैं। जीवन की विपत्तियों से बचने का कोई मार्ग नहीं है, इसलिए हमारे पास इन दो बड़े प्रश्नों के उत्तर होने चाहिए: यह क्यों हुआ? परमेश्वर क्या कर रहा है? इस पुस्तक का उद्देश्य इन्हीं “क्यों” और “क्या” के प्रश्नों का उत्तर देना रहा है। मुझे विश्वास है कि अब आप जानते हो कि बाइबल के अनुसार इनका उत्तर कैसे देना है।

- परेशानियाँ क्यों हैं? वे पाप के श्राप से प्रभावित इस संसार के जीवन का हिस्सा हैं, एक ऐसा संसार जो अदन की वाटिका में आदम से शुरू हुए पाप के कारण नकारात्मक रूप से प्रभावित हुआ है।

- परमेश्वर क्या कर रहा है? यद्यपि परमेश्वर कभी भी जीवन की परीक्षाओं का स्रोत नहीं है, फिर भी वह उन्हें अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उपयोग करने और वास्तविक बुराई में से महान भलाई उत्पन्न करने में समर्थ है, जबकि वह अनन्तकाल के लिए अपने परिवार को एकत्र कर रहा है।

हमने बाइबल में अनेक वास्तविक लोगों के वृत्तांतों पर विचार किया है जिन्होंने वास्तविक समस्याओं का सामना किया और परमेश्वर से वास्तविक सहायता प्राप्त की। ये उदाहरण हमें दिखाते हैं कि परमेश्वर कैसे जीवन की परीक्षाओं को अपनी महिमा और अपने लोगों की भलाई के लिए उपयोग करता है। आशा है कि आपने उनकी कहानियों से प्रोत्साहन पाया होगा।

हमने अपने संबंध में भी “क्यों” और “क्या” के प्रश्नों पर चर्चा की है।

• जब कठिनाइयाँ हमारे सामने आएँ, तब हमें क्या करना चाहिए? आनन्दित होने का चुनाव करो। परमेश्वर को स्वीकार करो। इसे प्रभु की स्तुति करने का अवसर समझो—यह बताते हुए कि वह कौन है, उसने क्या किया है, क्या कर रहा है, और क्या करेगा।

• हमें आनन्दित क्यों होना चाहिए? क्योंकि प्रभु की भलाई और मनुष्यों की सन्तानों के प्रति उसके अद्भुत कार्यों के लिए उसकी स्तुति करना सदैव उचित है।

जीवन तुम्हारे सामने जो कुछ भी लाए, तुम उसका सामना इस आश्वासन के साथ कर सकते हो कि तुम्हारी परीक्षाएँ परमेश्वर की ओर से नहीं आईं। तुम निश्चित हो सकते हो कि तुम्हारी विपत्तियों ने उसे चौंकाया नहीं है। परमेश्वर तुम्हारी परिस्थिति के विषय में पृथ्वी की रचना से पहले ही जानता था, और उससे निपटने के लिए उसके पास पहले से एक योजना है। परीक्षा चाहे कैसी भी हो, वह परमेश्वर से बड़ी नहीं है। वह तुम्हें तब तक संभाले रखेगा जब तक तुम्हें पूरी तरह बाहर न निकाल दे। इसलिए, तुम उसकी वाणी के द्वारा अपनी चुनौती का उत्तर दे सकते हो और परमेश्वर की महिमा कर सकते हो, इस प्रकार उसके लिए मार्ग तैयार करते हुए कि वह तुम्हें अपना उद्धार दिखाए।

जब यह वर्तमान कठिन समय बीत जाएगा, तब तुम पीछे मुड़कर स्पष्ट रूप से देख सकोगे कि परमेश्वर ने अपना वचन निभाया। जब वह अपने परिवार के लिए अपनी योजना को पूरा कर रहा था, तब उसने अपने लिए अधिकतम महिमा और जितने अधिक लोगों के लिए संभव हो उतनी अधिक भलाई उत्पन्न की—और उनमें आप भी शामिल होंगे।

